राजस्थान राज्य मानव अधिकार आयोग, जयपुर

आदेशिका

दिनांक :– 04.09.2019 परिवाद संख्याः–17 / 17 / 454

समक्ष : **खण्डपीठ**

माननीय अध्यक्ष : न्यायमूर्ति श्री प्रकाश टाटिया

माननीय सदस्य : न्यायमूर्ति श्री महेशचन्द्र शर्मा

माननीय अध्यक्ष : न्यायमूर्ति श्री प्रकाश टाटियाः–

1. आयोग द्वारा इस प्रकरण में मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 की धारा 12 (घ) के तहत विचार किया जा रहा है।

2. आयोग द्वारा इस प्रकरण में इस विषय पर विचार किया जा रहा है कि क्या घरेलू हिंसा से महिलाओं की सुरक्षा अधिनियम, 2005 के अधिनियम से महिलाओं के अधिकारों की सुरक्षा हो रही ?

3. अगर *''घरेलू हिंसा से महिलाओं की सुरक्षा अधिनियम, 2005''* से महिलाओं की सुरक्षा नहीं हो रही है, तब इस विधि के प्रावधानों में क्या सुधार किये जा सकते है, अथवा अन्य विधियों से महिलाओं के अधिकार सुरक्षित किये जाने हेतु अनुशंषा की जानी चाहिये।

आयोग सर्वप्रथम स्पष्ट करना चाहेगा कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा व *D Velusamy Vs. D. Patchaiammal, (2010) 10 SCC 469* व *Indra Sarma vs V.K.V.Sarma, (2013) 15 SCC 755* के प्रकरणों में अत्यन्त विस्तार से अधिनियम, 2005 की धारा 2 (f) में प्रयोग की गई

भाषा "relationship in the nature of marriage" ***"शादी की प्रकृति में संबंध"*** जो कि अधिनियम, 2005 में परिभाषित नहीं है को विस्तार से विचार कर "relationship in the nature of marriage" में *Common Law Marriage* की शर्तो का होना आवश्यक घोषित किया गया। *माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा "relationship in the nature of marriage" के रिश्ते को ''लिव–इन–रिलेशनशिप'' से पुरी तरह से भिन्न घोषित भी किया जा चुका है। ''लिव–इन–रिलेशनशिप'' को घरेलू नातेदारी (Domestic Relationship) में सम्मलित नहीं होना घोषित किया गया है व प्रत्येक लिव–इन–रिलेशनशिप व्यक्ति (महिलाओं) को अधिनियम, 2005 का लाभ प्राप्त नहीं है, यह घोषित किया जा चुका है।*

माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा डी.वेलुसामी के प्रकरण में पद संख्या *(32)* में की गई टिप्पणी निम्न प्रकार से हैः–

> *In our opinion not all live in relationships will amount to a relationship in the nature of marriage to get the benefit of the Act of 2005. To get such benefit the conditions mentioned by us above must be satisfied, and this has to be proved by evidence. If a man has a `keep' whom he maintains financially and uses mainly for sexual purpose and/or as a servant it would not, in our opinion, be a relationship in the nature of marriage' (Emphesis supplied)*

परन्तु आयोग के समक्ष तथ्यात्मक रूप से उचित कारण उपलब्ध है। जिससे स्पष्ट होता है कि *आमजन "relationship in the nature of marriage" व लिव–इन–रिलेशनशिप में अन्तर नहीं जानते।* आयोग के समक्ष ऐसे प्रकरण भी प्रस्तुत हुए है जिसमें महिला का

तात्पर्य relationship in the nature of marriage में रहने से है फिर भी महिलायें स्वयं के प्रकरण में लिव–इन–रिलेशनशिप में रहने का कथन कर अधिनियम, 2005 के तहत सुरक्षा चाहती है। इस प्रकार से महिलायें जिनका स्वयं का अधिनियम, 2005 के तहत जो सुरक्षा प्रदान की जाती है उससे स्वयं के इस कथन से की वह महिला लिव–इन–रिलेशनशिप में पुरूष के साथ रह रही थी, अपनी गलती से अथवा अपनी गलत धारणा से अधिनियम, 2005 से प्रदान लाभ भी प्राप्त करने से वंचित हो सकती है।

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने खेद जताया है कि अधिनियम, 2005 "relationship in the nature of marriage" को परिभाषित नहीं किया गया है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय की पद संख्या 19 में की गई टिप्पणी निम्न प्रकार से हैः–

> "***Unfortunately, this expression (***"relationship in the nature of marriage") ***has not been defined in the Act. Since there is no direct decision of this Court on the interpretation of this expression we think it necessary to interpret it because a large number of cases will be coming up before the Courts in our country on this point, and hence an authoritative decision is required."*** *(Emphesis supplied)*

अधिनियम, 2005 में इस गम्भीर कमी को देखते हुए माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा डी. वेलुसामी के प्रकरण में पद संख्या 30 में यह निर्णय दिया गया है कि "relationship in the nature of marriage" आम कानून (***Common Law Marrige***) में शादी के समान रिश्ता है। शादी नहीं करने पर भी ***"शादी की प्रकृति में संबंध"*** किस प्रकार से व किन शर्तो की पूर्ति करने पर माना जा सकता है, इसका

विवरण उपरोक्त निर्णय की पद संख्या 31 के उप पद संख्या (*a-b*) में उल्लेखित किया गया है। जो निम्न प्रकार से है :–

(a) The couple must hold themselves out to society as being akin to spouses.

(b) They must be of legal age to marry.

(c) They must be otherwise qualified to enter into a legal marriage, including being unmarried.

(d) They must have voluntarily cohabited and held themselves out to the world as being akin to spouses for a significant period of time.

माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इस निर्णय में स्पष्ट घोषणा की गई है कि अधिनियम, 2005 में बताये गये धारा 2 (f) के रिश्ते "relationship in the nature of marriage" के लिये निर्धारित उपरोक्त शर्तों के साथ ही, ऐसे रिश्ते के दोनों पक्षकारान का संयुक्त रूप से मकान में लम्बे समय तक रहना, दोनों व्यक्तियों द्वारा समाज के सामने इस रिश्ते को प्रकट कर देना तथा आपसी सहमति से शारिरीक रिश्ते बनाने आवश्यक है।

यही नहीं, बल्कि, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा *श्रीमति इन्द्रा शर्मा* के प्रकरण में, एक महिला का एक शादीशुदा पुरूष के साथ रहने के आधार पर अधिनियम, 2005 में परिभाषित "relationship in the nature of marriage" के अन्तर्गत होना अस्वीकार किया गया है। अर्थात महिला अथवा पुरूष यदि कोई शादीशुदा है और उसके पश्चात कोई पुरूष अथवा महिला संयुक्त रूप से मकान में रह कर शारिरीक संबंध स्थापित करते है तब ऐसे व्यक्तियों के रिश्ते को "relationship in the nature of marriage" नहीं माना गया है।

माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा श्रीमति इन्द्रा शर्मा के प्रकरण Privy Council के निर्णय पर विचार कर में दिये गये निर्णय का पद संख्या 56 उल्लेख करना उचित होगा :–

> "***Appellant, admittedly, entered into a live-in-relationship with the respondent knowing that he was married person, with wife and two children, hence, the generic proposition laid down by the Privy Council in Andrahennedige Dinohamy v. Wiketunge Liyanapatabendage Balshamy, AIR 1927 PC 185, that where a man and a woman are proved to have lived together as husband and wife, the law presumes that they are living together in consequence of a valid marriage will not apply and, hence, the relationship between the appellant and the respondent was not a relationship in the nature of a marriage, and the status of the appellant was that of a concubine. A concubine cannot maintain a relationship in the nature of marriage because such a relationship will not have exclusivity and will not be monogamous in character."*** *(Emphesis supplied)*

माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा श्रीमति इन्द्रा शर्मा के प्रकरण में माननीय Privy Council के निर्णय के पश्चात के सर्वोच्च न्यायालय के ही पूर्व में दिये गये निर्णयों को स्वीकार करते हुए यह भी घोषणा की गई है कि शादीशुदा व्यक्ति के साथ रहने व शारिरीक संबंध रखने के कारण से, जो दोनों पक्षकारान के शादीशुदा होने की धारणा की जा सकती है, वह व्यक्ति के शादीशुदा प्रमाणित होने पर धारणा नहीं ली जा सकती है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का भाग पद संख्या 56 यहां उल्लेखित करना उचित होगा :–

> "Reference may also be made to the judgments of this Court in *Badri Prasad v. Director of*

> *Consolidation 1978 (3) SCC 527 and Tulsa v. Durghatiya 2008 (4) SCC 520. In Gokal Chand v. Parvin Kumari AIR 1952 SC 231* this Court held that the continuous cohabitation of man and woman as husband and wife may raise the presumption of marriage, but the presumption which may be drawn from long cohabition is a rebuttable one and if there are circumstances which weaken and destroy that presumption, the Court cannot ignore them. Polygamy, that is a relationship or practice of having more than one wife or husband at the same time, or a relationship by way of a bigamous marriage that is marrying someone while already married to another and/or maintaining an adulterous relationship that is having voluntary sexual intercourse between a married person who is not one's husband or wife, cannot be said to be a relationship in the nature of marriage." (Emphesis supplied)

माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा लम्बे समय तक लिव–इन–रिलेशनशिप में रहने से महिला की पुरूष पर निर्भरता हो जाने व बच्चों के भविष्य इत्यादि के दुष्परिणामों व विशेष रूप से लिव–इन–रिलेशनशिप से उत्पन्न हुए बच्चों के विषय को ध्यान में रखते हुए भी महत्वपूर्ण टिप्पणी की गई है कि ***विधि द्वारा शादी उपरांत अन्य से शारिरीक रिश्तों को प्रोत्साहन नहीं दिया जा सकता है।*** माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इस विषय पर विचार कर अधिनियम, 2005 में संशोधन कर लिव–इन–रिलेशनशिप से उत्पन्न हुए बच्चों के हितों की रक्षा करने हेतु प्रावधान बनाने का सुझाव दिया गया। माननीय सर्वोच्च न्यायालय की टिप्पणी निम्न प्रकार से है :–

> (61). "Such relationship, it may be noted, may endure for a long time and can result pattern of dependency and vulnerability, and increasing

number of such relationships, calls for adequate and effective protection, especially to the woman and children born out of that live-in-relationship. *Legislature, of course, cannot promote pre-marital sex, though, at times, such relationships are intensively personal and people may express their opinion, for and against.* See S. Khushboo v. Kanniammal and another (2010) 5 SCC 600.

62*."**Parliament has to ponder over these issues, bring in proper legislation or make a proper amendment of the Act, so that women and the children, born out of such kinds of relationships be protected, though those types of relationship might not be a relationship in the nature of a marriage."** (Emphesis supplied)*

माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा श्रीमति इन्द्रा शर्मा के प्रकरण में शादीशुदा पुरूष जिसके दो पुत्र भी थे के साथ प्रार्थीनी के रहने के आधार पर भरण–पोषण राशि दिलानें से इन्कार करते समय इस तथ्य को भी ध्यान में रखा गया कि अगर ऐसे रिश्ते की महिला को कोई भरण–पोषण की राशि दी जाती है तो वह पुरूष की शादीशुदा पत्नि व परिवार के हित में भी नहीं होगा। माननीय सर्वोच्च न्यायालय की इस संबंध में की गई टिप्पणी निम्न प्रकार से है :–

(65). "If we hold that the relationship between the appellant and the respondent is a relationship in the nature of a marriage, we will be doing an injustice to the legally wedded wife and children who opposed that relationship. Consequently, any act, omission or commission or conduct of the respondent in connection with that type of relationship, would not amount to "domestic violence" under Section 3 of the DV Act."

> (67). "We are conscious of the fact that if any direction is given to the respondent to pay maintenance or monetary consideration to the appellant, that would be at the cost of the legally wedded wife and children of the respondent, especially when they had opposed that relationship and have a cause of action against the appellant for alienating the companionship and affection of the husband/parent which is an intentional tort." *(Emphesis supplied)*

अधिनियम, 2005 में उपरोक्त कमियां व रिश्तों के भ्रम के संबंध में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णयों के पश्चात भी आमजन तक विधि की सही स्थिति नहीं पहुंच पा रही है। **इसके साथ अधिनियम, 2005 में सबसे महत्वपूर्ण कमी व दोष यह है कि अधिनियम, 2005 के किसी भी प्रावधान से "relationship in the nature of marriage" को समाप्त करने के लिये कोई भी कारण होना तक आवश्यक नहीं रखा गया है। अतः कोई भी व्यक्ति, स्त्री अथवा पुरूष और साधारणतया पुरूष द्वारा महिला को बिना किसी गलती व बिना किसी कारण से अत्यन्त स्वैच्छाचारी व अमानवीय तरिके से रिश्ते समाप्त करने के अधिकार प्रदान कर दिया गया है** जो कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय के सायरा *बानों बनाम भारत संघ, (2017) 9 SCC 1* के निर्णय व *सायरा बानों* के प्रकरण में अनेको पूर्व के न्यायिक दर्शाष्टान्तों के अनुसार पूर्णतया अमानवीय व पूर्णतया स्त्री विरोधी माना गया है।

उपरोक्त बिन्दुओं पर आयोग को विचार करने की आवश्यकता इस कारण से हुई है, क्योकि आयोग में अत्यन्त गम्भीर प्रकृति के *लिव–इन–रिलेशनशिप* के आधार पर दो महिलाओं के प्रकरण प्राप्त

हुए, इन दोनों प्रकरणों के तथ्य महिलाओं की निजता को ध्यान में रखते हुए इस प्रकरण में उल्लेखित नहीं किये जा रहे है। उपरोक्त प्रकरणों से अथवा अन्यथा भी आयोग की राय में चूंकि शादी व शादी के समान रिश्ते सम्पूर्ण विश्व में मानव अधिकार में सम्मलित है तथा सम्पूर्ण विश्व में सैकडों वर्षो से शादी को एक संस्था (Institution)/सामाजिक संस्था (Social Institution) के रूप में विधि द्वारा न्यायिक निर्णयों से ही नहीं बल्कि अनुच्छेद–23 *International Covenant On Civil And Political Rights, 1966 (ICCPR)* में भी परिवार को *स्वाभाविक रूप* से समाज का एक मूल ईकाइ माना है व परिवार की सुरक्षा के लिये राज्य की जिम्मेदारी घोषित की गई है। इस कारण से ही नहीं बल्कि *Universal Declaration Of Human Rights , 1948* के अनुच्छेद–16 के अनुसार भी परिवार को स्वाभाविक रूप से समाज की इकाई घोषित करते हुए इसकी सुरक्षा की जिम्मेदारी राज्य की रखी गई है इस लिये आयोग के लिये यह है एक महत्वपूर्ण मानव अधिकार का विषय है।

इस प्रकरण में आयोग द्वारा विस्तृत आदेश दिनांक 02.02.2017 द्वारा प्रसंज्ञान लिया गया। यह आमजन से संबंधित विषय है अतः आयोग द्वारा आमजन के विचार भी आमंत्रित किये गये। आयोग द्वारा राज्य सरकार का मत प्राप्त करने हेतु प्रमुख शासन सचिव, गृह विभाग, राजस्थान सरकार, जयपुर को आदेश दिनांक 02.02.2017 की प्रतिलिपि प्रेषित कर राज्य सरकार का मत चाहा गया।

यह एक हर्ष का विषय है कि राज्य सरकार द्वारा विषय की गम्भीरता को अच्छी तरह से समझते हुए राज्य की पुलिस व महिला

अधिकारिता विभाग, राजस्थान, जयपुर से इस विषय पर मत प्राप्त करने हेतु प्रयत्न किये गये। इसी प्रकार राज्य पुलिस विभाग द्वारा अत्यन्त सकारात्मक रूप से विषय पर राजस्थान के समस्त महानिदेशक एवं महानिरीक्षक, पुलिस रेंज, राजस्थान मय रेलवे व पुलिस आयुक्त, जोधपुर एवं जयपुर से सुझाव प्राप्त कर अपने पत्र दिनांक 28.09.2018 से बिन्दुवार 14 बिन्दु आयोग के विचारार्थ रखे गये। आयुक्त महिला अधिकारिता विभाग, जो अधिक संबंध विभाग है, द्वारा आयेाग को कोई मत या सुझाव नहीं दिये गये।

आमजन से, डॉ. तारा लक्ष्मण गहलोत, पूर्व चाईल्ड वेलफेयर कमेटी, पूर्व सदस्य (C.W.C.) जो दो विषय में एम.ए. व नागरिकशास्त्र विषय में पी.एच.डी. के अलावा जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय में एशोसियेट प्रोफेसर के पद से सेवानिवृत है तथा अनेकों अन्य संस्थाओं से जुड़ी हुई है। उनके द्वारा लिव–इन–रिलेशनशिप पर अपने पत्र दिनांक 28.02.2017 के साथ इनके प्रकाशित लेख हिन्दी व मारवाड़ी की प्रतिलिपियां भी आयोग के विचारार्थ प्रेषित की गई। श्री प्रशान्त व्यास, सवाईमाधोपुर द्वारा तथा एक अन्य व्यक्ति को विस्तृत 6 पृष्ठ की टिप्पणी (बिना नाम), श्री गोविन्द राम बलेचा, भरतपुर, श्री सी.बी. वर्मा, जयुपर, श्री मयंक जैन, डीग, भरतपुर, श्री रामबालक शर्मा, बिहार द्वारा अपना पक्ष रखा गया। उपरोक्त व्यक्तियों के अलावा संक्षिप्त ई–मेल में श्रीराम अग्रवाल व सर्व श्री प्रकाश सैनी, अक्षय मीना, राजेश मीना, अक्षय शुक्ला, भुनेश्वर चौधरी, मिर्जा स्कीरी, विरेन सिंह, चन्द्र मोहन मीना द्वारा अत्यन्त संक्षिप्त ई–मेल से अपने विचार आयोग को प्रस्तुत किये।

उपरोक्त सुझावों में *लिव–इन–रिलेशनशिप* के दुष्परिणाम का विस्तार से उल्लेख न करके सार रूप में सुझाव दिये गये है कि ऐसे रिश्तों के लिये महिला की न्यूनतम आयु 22 वर्ष व पुरूष की आयु 24 वर्ष होनी चाहिये। *लिव–इन–रिलेशनशिप* में रहने के पूर्व सक्षम अधिकारी के समक्ष एक साथ उपस्थित होकर आवेदन प्रस्तुत करना व इस रिश्ते की अनुमति से पूर्व आवेदन की समय सीमा निश्चित करना, बच्चों की जिम्मेदारी नियत करना, ऐसे रिश्तों को समाप्त करने के लिये कारण स्पष्ट किया जाना, एक रिश्ता रहते समय दूसरा समान रिश्ता नहीं बनाया जा सके। सन्तान के पितृत्व के विवादों से बचने के लिये, सम्पति के विवादों से बचने के लिये, सम्पति के विवादों से बचने के लिये, ऐसे रिश्तों का पंजीकरण होने के साथ में एक विचार यह भी रखा गया कि शादी एक प्रकार का बन्धन है, जबकि लिव–इन–रिलेशनशिप एक प्रकार की मित्रता है। बन्धन शारिरीक, मानसिक व सामाजिक उत्पीड़न दे सकता है, जबकि मित्रता ऐसा उत्पीड़न नहीं देगी व इससे व्यक्तिगत स्वतंत्रता प्राप्त होगी। लिव–इन–रिलेशनशिप किसी महिला को ज्यादा आत्मनिर्भर बना सकती है। लिव–इन–रिलेशनशिप से महिला की निजता का हनन नहीं होगा और इसके साथ ही सुझाव दिया गया कि इन रिश्तों को कानूनी संरक्षण प्रदान किया जाना चाहिये व गर्भावस्था में पुरूष द्वारा महिला को छोड़ने का अधिकार नहीं होना चाहिये।

राजस्थान सरकार द्वारा राज्य के पुलिस विभाग द्वारा सम्पूर्ण पुलिस व्यवस्था से सुझाव मांगकर जो बिन्दु आयोग के समक्ष प्रस्तुत किये है उनका यहां उल्लेख करना अत्यन्त उपयोगी रहेगा।

समस्त महानिदेशक पुलिस एवं महानिरीक्षक पुलिस रेंजेज राज. मय रेल्वेज व पुलिस आयुक्त जयपुर/जोधपुर से सुझाव प्राप्त किये गये जो निम्नांकित हैं:-

1. *लिव इन रिलेशनशीप को कानूनी रूप से मान्यता दिये जाने के सम्बन्ध में इन सम्बन्धों को नियन्त्रित करने के उद्देश्य से लिव इन रिलेशनशीप को बीच में छोडने के सम्बन्ध में ऐसी अवस्था रहने के दौरान आपसी धोखाधडी किये जाने भरण-पोषण भत्ता दिये जाने तथा पैतृक मान्यता एवं पैतृक सम्पत्ति से हिस्सा दिये जाने के सम्बन्ध में विस्तृत/व्याख्यात्मक कानून बनाने की आवश्यकता रहेगी।*

2. *माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इन्द्रा शर्मा तथा डी वैल्यूसामी प्रकरणों में दिये गये निर्णय तथा डोमेस्टिक वाईलेन्स एक्ट, 2005 की, की गई व्याख्या द्वारा लिव इन रिलेशनशीप को कुछ परिस्थितियों तथा शर्तों की पूर्ति किये जाने पर मान्यता प्रदान की गई है।*

3. *वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुए लिव इन रिलेशनशीप में रहने वाली महिलाओं को डोमोस्टिक वाईलेन्स एक्ट में अधिकार प्रदान किये गये हैं। इसके पश्चात भी लिव इन रिलेशनशीप में रहने वाले जोडे के सम्बन्ध में किसी आपसी विवाद के उत्पन्न होने की स्थिति में सम्बन्धित विवाद के तथ्यों को ध्यान में रखकर निर्णय लिया जाना उचित रहेगा।*

4. *लिव इन रिलेशनशीप के पश्चात उत्पन्न होने वाले बच्चों का लिव इन रिलेशनशीप में रहने वाले माता-पिता की सम्पत्ति के अतिरिक्त पैतृक सम्पत्ति में भी हक मिलना*

चाहिए अथवा नहीं यह भी परिस्थितियों व तथ्यों के आधार पर निर्णित किया जावे।

5. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा लिव इन रिलेशनशीप हेतु आवश्यक बताई गई शर्तों के अन्तर्गत रहने वाले पक्षकारों (लिव इन रिलेशनशीप के आधार पर रहने वालों) में से यदि किसी एक पक्ष द्वारा लिव इन रिलेशनशीप को छोडकर अन्य पक्ष से नियमित विवाह किया जाता है तो ऐसे प्रकरण में लिव इन रिलेशनशीप के भागीदार को ऐसे विवाह को पुलिस के माध्यम से रूकवाने का अधिकार होना चाहिए।

6. लिव इन रिलेशनशीप के दौरान बने रिश्ते जो लगातार कई वर्षों से चले आ रहे हैं के अन्तर्गत एक पक्ष दूसरे के बिना सहमति अथवा बिना अन्य पक्ष की गलती के सम्बन्ध विच्छेद करता है, ऐसे प्रकरण में न्यायालय से सम्बन्ध विच्छेद की डिक्री लिया जाना आवश्यक होना चाहिए, जिससे कि सामान्य विवाह की भांति पक्षकारों को आपस में पुनः विचार करने का और अपना पक्ष रखने का अवसर प्रदान हो सके।

7. धारा 125 दण्ड प्रक्रिया संहिता में पत्नि के साथ में लिव इन रिलेशनशीप में रहने वाली स्त्री को शामिल किया जा सकता है।

8. भा.दं.सं. की धारा 498ए में भी किसी स्त्री के साथ "लिव इन रिलेशनशीप में रहने वाली स्त्री" जोड दिया जावे तो क्रूरता होने पर आपराधिक कार्यवाही की जा सकती है।

9. *धारा 494 एवं 497 भा.दं.सं. में भी लिव इन रिलेशनशीप में रहने वाली स्त्री जोडा जा सकता है।*

10. *धारा 375 भा.दं.सं. में बलात्संग की परिभाषा के अपवाद में "पुरूष का अपनी पत्नि के साथ के अलावा रिलेशनशीप में रह रही महिला के साथ मैथुन बलात्संग नहीं है जबकि पत्नि एवं रिलेशनशीप में रह रही महिला 15 वर्ष से कम आयु की नहीं है" जोडा जा सकता है।*

11. *भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 12 में जन्म के धर्मजत्व के निश्चयात्मक सबूत के सम्बन्ध में "लिव इन रिलेशनशीप में रहने वाली स्त्री" को भी स्थान दिया जा सकता है।*

12. *हिन्दू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005 की धारा 16 एवं अनुसूची के क्लोज प्रथम व द्वितीय में "लिव इन रिलेशनशीप में रहने वाली स्त्री" को शामिल किया जा सकता है।*

13. *लिव इन रिलेशनशीप का रजिस्ट्रेशन होना आवश्यक किया जावे एवं दोनों पक्षों में से किसी भी पक्ष द्वारा रजिस्ट्रेशन को निरस्त करवाये जाने का प्रावधान होना चाहिए जिसकी पृथक प्रक्रिया निर्धारित की जानी चाहिए।*

14. *लिव इन रिलेशनशीप की निश्चित परिभाषा भी निर्धारित की जानी चाहिए तथा पत्नि, बच्चे एवं पति के अधिकार/दायित्व भी स्पष्ट निर्धारित किये जाने चाहिए।*

यहां पुनः उल्लेख करना आवश्यक है कि लिव–इन–रिलेशनशिप से राज्य सरकार के पुलिस विभाग का तात्पर्य स्वाभाविक रूप से अधिनियम, 2005 की धारा (f) में परिभाषित “relationship in the nature of

marriage" ***"<u>शादी की प्रकृति में संबंध</u>"***से है ऊपर दिये गये सुझाव निश्चित रूप से इन नये रिश्तों के कारण से होने वाले व्यवहारिक कठिनाईयों को समझ कर दिये गये है। जिन पर विधि निर्माताओं द्वारा पुरी गम्भीरता से विचार किया जाना आयोग प्रस्तावित करता है।

आयोग द्वारा प्राप्त सुझाव व इसके संबंध में विधि व विधि के प्रावधानों के साथ माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा शादी/विवाह संबंध तथा शादी के समान रिश्ते व लिव–इन–रिलेशनशिप विषय पर दिये गये अत्यन्त सारगर्भित निर्णयों पर विचार किया गया है।

आयोग सर्वप्रथम इस विषय पर विचार करेगा कि विवाह क्या है, क्यों आवश्यक है, इसका क्या महत्व है तथा विवाह के क्या परिणाम होते है ?

भारत में विभिन्न धर्म, जाति, समाज व इनमें अनेकों श्रेणीयों में यह समानता है कि, इन सभी में लिखित अथवा अलिखित ही नहीं बल्कि प्रचलित रूढ़ी *(Custom)* या प्रथा (*Usages*) द्वारा विवाह की पद्धति स्थापित है। इसमें कई प्रकार के विवाह, एकल विवाह एवं बहुविवाह, नाता प्रथा भी शामिल है। पूर्व में बाल विवाह की अनुमति प्राप्त थी, जिसे विधि द्वारा समाप्त किया जा चुका है। इनमें विवाह के रीति–रिवाज अलग–अलग हो सकते है। परन्तु विवाह व शारीरिक संबंध हेतु एक निश्चित प्रक्रिया स्थापित है। जिससे आमजन को इन रिश्तों की पूर्ण सूचना व्यवहार से अथवा अन्यथा प्रकार से रहती है। ऐसे रिश्तो के सदस्यों को पति–पत्नि के रूप में जाना जाता है व कौन किससे विवाहित है, इसकी जानकारी घर, परिवार व समाज को

स्वतः हो जाये, इसकी मजबूत व्यवस्था सैकडों साल से है, चाहे लिखित विधि, रूढ़ि अथवा प्रथा से थी, व है।

शादी व विवाह के रिश्ते क्या है, इसके संबंध में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा *इन्द्रा शर्मा बनाम वी0के0वी0शर्मा* के निर्णय दिनांक 26.11.2013 में विस्तार से विचार किया जा चुका है। *इन्द्रा शर्मा* के प्रकरण में शादी व विवाह के रिश्तों के संबंध में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिये गये निर्णय में शादी व विवाह के रिश्तों का महत्व प्रभाव व परिणाम का उल्लेख निर्णय के पद संख्या 23 में अंकित किया गया है जिसे इस निर्णय में उल्लेख करना आवश्यक है :—

"MARRIAGE AND MARITAL RELATIONSHIP": -

23. *Marriage is often described as one of the basic civil rights of man/woman, which is* ***voluntarily*** *undertaken by the parties in* ***public*** *in a* ***formal way****, and once concluded, recognizes the parties as husband and wife. Three elements of common law marriage are (1) agreement to be married (2)* ***living together as husband and wife****, (3)* ***holding out to the public that they are married.*** Sharing a ***common household*** and ***duty to live together*** form part of the 'Consortium Omnis Vitae" which *obliges spouses to live together, afford each other reasonable marital privileges and rights and be* ***honest and faithful to each other***. One of the most important invariable consequences of marriage is the ***reciprocal support*** and the responsibility of maintenance of the common household, jointly and severally. *Marriage as an institution has great legal significance and various obligations and duties flow out of marital relationship, as per law,* in the matter of inheritance of property, succession ship, etc.

Marriage, therefore, involves legal requirements of formality, publicity, exclusivity and all the legal consequences flow out of that relationship.

24. Marriages in India take place either following the personal Law of the Religion to which a party is belonged or following the provisions of the Special Marriage Act. Marriage, as per the Common Law, constitutes a contract between a ***man and a woman, in which the parties undertake to live together and support each other. Marriage, as a concept, is also nationally and internationally recognized.*** O'Regan, J., in ***Dawood and Another v. Minister of Home Affairs and Others 2000 (3) SA 936 (CC)*** noted as follows:

*"**Marriage and the family are social institutions of vital importance**. Entering into and sustaining a marriage is a matter of intense private significance to the parties to that marriage for they make a promise to one another to establish and maintain an intimate relationship for the rest of their lives which they acknowledge obliges them to support one another, to live together and to be faithful to one another. Such relationships are of profound significance to the individuals concerned.* But such ***relationships have more than personal significance at least in part because human beings are social beings whose humanity is expressed through their relationships wih others.*** Entering into marriage therefore is to enter into a relationship that has ***public significance*** as well.

The institutions of marriage and the family are important ***social institutions*** that provide for the ***security***, ***support*** and ***companionship*** of members of our society and bear an important role in the ***rearing of children***. The celebration of a marriage gives rise to moral and ***legal obligations***, particularly the ***reciprocal duty of***

> ***support*** placed upon spouses and their joint responsibility for supporting and raising children born of the marriage. These legal obligations perform an ***important social function***. This importance is symbolically acknowledged in part by the fact that ***marriage is celebrated generally in a public ceremony, often before family and close friends....” (Emphasis Supplied)***

माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा शादी की प्रथा को राष्ट्रीय व अर्न्तराष्ट्रीय रूप से स्वीकृत व्यवस्था घोषित करते हुए (Dawood and Another v. Minister of Home Affairs and Others 2000 (3) SA 936 (CC) के प्रकरण का भी उल्लेख (ऊपर अंकित) किया गया है। उक्त प्रकरण में शादी को व परिवार को सामाजिक व्यवस्था के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है तथा उपरोक्त प्रकरण (*दाऊव व अन्य)* में भी ***शादी को पक्षकारान के अन्य दायित्वों के साथ एक–दूसरे के भरोसे व विश्वास को पुरा महत्व दिया गया है और कहा गया है कि शादी व परिवार की व्यवस्था सामाजिक व्यवस्था, सुरक्षा, सहायता, सहयोग तथा बच्चों के पालन में अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान देते है।***

आयोग के लिये इस विषय पर उल्लेख करना अत्यन्त आवश्यक होने से व क्योकि माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा शादी, विवाह संबंध ही नहीं ''शादी की प्रकृति में संबंध''/ शादी के प्रकृति के संबंध, दोनों विषय पर न सिर्फ इन्द्रा शर्मा के प्रकरण व अन्य माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय, *D Velusamy Vs. D. Patchaiammal, (2010) 10 scc 469 , S Khushboo Vs Kanniamml and another, 2010 (5) SCC 600* व अनेकों निर्णयों में विस्तार से विचार किया जा चुका है। अतः आयोग द्वारा मात्र यही अंकित करना आवश्यक है कि

शादी व विवाह संबंध सामाजिक जीवन के लिये अत्यन्त आवश्यक व्यवस्था है, इससे सामाजिक सुरक्षा व अन्य स्त्री–पुरूष तथा ऐसे रिश्तों से उत्पन्न हुए बच्चों को सुरक्षा, सहायता, सहयोग व एक व्यवस्था प्राप्त होती है। अतः एक सुस्थापित व सुव्यवस्थित सामाजिक व्यवस्था की एक इकाई से आगे बढ़ कर एक Institution होते हुए भी किन कारणों से **''शादी के समान रिश्तों''** को विधिक मान्यता प्रदान कर नया कानून बनाया गया, एक गहन मानव अधिकार का विषय होने के कारण से विचार करना और अधिक आवश्यक हुआ।

कुछ आपसी रिश्तों/संबंधों में शादी वर्जित है। इसका उल्लेख भी मिलता है। व्यक्तिगत कानूनों में ही नहीं बल्कि विधि द्वारा स्थापित अन्य कानूनो में निर्धारित किया जा चुका है कि एक आयु के पश्चात ही व्यक्ति शादी कर सकता है। यही नहीं यह प्रावधान इतना सख्त है कि नाबालिग से उसकी सहमति से भी शारीरिक संबंध स्थापित करना जघन्य अपराध की श्रेणी में आता है और इसके लिये भारतीय संविधान के अनुच्छेद–15 के उपबन्ध 3 के अधिकारों का प्रयोग करते हुए *Protection of Children from Sexual Offences (POCSO) Act, 2012* भी बनाया गया है। इस विषय पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय *Independent Thought Vs. U.O.I, (2017) 10 SCC 800* एक महत्वपूर्ण दिशा निर्देश प्रदान करने वाला बाध्यकारी निर्णय है।

माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा *Hindu Marriage Act, 1955* में विभिन्न महत्वपूर्ण धाराओं का उल्लेख किया गया है। आयोग एक्ट, 1955 में विवाह संबंध कानूनों द्वारा अत्यन्त विस्तार से बनाये गये प्रावधानों का यहां उल्लेख करना उचित समझता है :–

1. Conditions for a Hindu marriage
2. Ceremonies for a Hindu marriage
3. Registration of Hindu Marriages
4. Restitution of Conjugal Rights
5. Judicial Separation
6. Nullity of Marriage
7. Voidable Marriages
8. Divorce
9. Divorce by Mutual Consent
10. Restriction against filling of divorce petition
11. When Divorced persons can marry again
12. Legitimacy of children of void and voidable marriage
13. Punishment for contravention of condition of Hindu marriage
14. Maintenance pendent lite, interim and permanent
15. Custody of children

Hindu Marriage Act, 1955 में ही नहीं बल्कि लगभग सभी व्यक्तिगत विधियों में सैकडों वर्षो से ऊपर अंकित विषयों में कुछ कम व ज्यादा विषय पर प्रावधान बनाये गये है। संक्षिप्त में, व सार रूप से यह कहा जा सकता है कि, **शारीरिक रिश्ते स्थापित करने व इससे संबंधित सभी विषयों पर भारत में भिन्न–भिन्न कानून मय भिन्न–भिन्न व्यक्तिगत कानून (*Personal Law*) व रूढ़ी एवं प्रथा प्रभावी है, जो अपने विषय पर पूर्ण (*Self Contained*) कानून है।**

ना सिर्फ हिन्दू धर्म में व हिन्दू विधि में अपितु लगभग सभी धर्मो व जातियों में शादी को एक पवित्र रिश्ता समझा जाता है। मुस्लिम विधि में व अन्य किसी धर्म, जाति अथवा देश में शादी को अगर एक

अनुबन्ध के रूप में समझा जाता है तो प्रतीत होता है कि इस धारणा से विवाह के संबंध में कुछ भ्रांतियां उत्पन्न हो गई है। मुस्लिम विवाह व सामाजिक अनुबन्ध (Civil Contract) से भी होने वाली शादी में भी लगभग वही मूल तत्व सामाजिक अनुबन्ध का भाग सम्मलित है जैसा कि एक पवित्र बन्धन होता है। इसके भी नियम व महत्व का पिछले अनेकों दशकों ही नहीं बल्कि शताब्दीयों से न्यायालयों द्वारा विस्तार से वर्णन न्यायिक दृष्टान्तों में किया गया है। पूर्व के माननीय कलकत्ता व गोवाहटी उच्च न्यायालयों *फरजुन्द हुसैन बनाम जानू बीबी (ILR(1878) 4 Cal 588)* व *जियाउद्दीन अहमद बनाम अनवरा बैगम, (1981) 1 Gau LR 358* व *रूकिया खातून बनाम अब्दूल खलीक लश्कर (1981) 1 Gau LR 375* के निर्णय पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा *समीम आरा बनाम उत्तरप्रदेश राज्य (2002) 7 SCC 518* में मुस्लिम विवाह के रिश्तों के संबंध में अत्यन्त महत्वपूर्ण व अत्यन्त आवश्यक तत्वों का उल्लेख कर इन महत्वपूर्ण तत्वों को विधिक मान्यता प्रदान की गई। समीम आरा के प्रकरण में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणी का उल्लेख सर्वोच्च न्यायालय की संविधान पीठ द्वारा सायरा बानों बनाम भारत संघ (ट्रीपल तलाक केस) में किया जाकर मुस्लिम विवाह के आवश्यक तत्वों विवाह के लिये न्यायिक निर्णय से मान्यता प्रदान की गई।

आमजन में अब भी, लम्बे समय से एक समान न्यायिक विचार व घोषणाओं के बावजूद भी शादी के रिश्तों के बारे में कभी धर्म, कभी जाति, कभी क्षेत्र और कभी देश के अनुसार अनेकों भ्रांन्तियां विद्यमान है। ऐसी भ्रांतियों के संबंध में भारत में विभिन्न उच्च न्यायालयों द्वारा अत्यन्त गम्भीरता से विचार कर भ्रांतियों का निराकरण करने की चेष्टा

की गई परन्तु प्रतीत होता है कि कुछ भ्रांतियां अभी भी दूर नहीं हो पायी है। ***मुस्लिम विवाह/विवाह के रिश्ते में भी महिलाओं की जो स्थिति प्रकट की जाती है/दिखाई जाती है वह स्थिति वास्तव में है नहीं।*** माननीय केरल उच्च न्यायालय द्वारा (माननीय न्यायमूर्ति कृष्णा अयर) द्वारा Rawther Vs. Sowramma, AIR 1971 Kerala 261 निर्णय दिया जिसे माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा *Shamim Ara vs State Of U.P*, **(2002) 7** *SCC 518* में विस्तार से उल्लेखित किया है। *Shamim Ara* के प्रकरण में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा *Sowramma* के निर्णय में से उल्लेखित किये गये निर्णय के कुछ अंश मुस्लिम विवाह के रिश्ते व विवाह विच्छेद में की गई टिप्पणी इस प्रकरण में विचार हेतु अत्यन्त महत्वपूर्ण है। *Sowramma* के प्रकरण में निम्न महत्वपूर्ण विचार उल्लेखित किया जा रहा है।

> "*It is a popular fallacy that a Muslim male enjoys, under the Quaranic Law, unbridled authority to liquidate the marriage. "The whole Quoran expressly forbids a man to seek pretexts for divorcing his wife, so long as she remains faithful and obedient to him,* 'if they (namely, women) obey you, then do not seek a way against them'." (Quaran IV:34). The Islamic *"law gives to the man primarily the faculty of dissolving the marriage, if the wife, by her indocility or her bad character, renders the married life unhappy; but in the absence of serious reasons, no man can justify a divorce, either in the eye of religion or the law.* If he abandons his wife or puts her away in simple caprice, he draws upon himself the divine anger, for the curse of God, said the Prophet, rests on him who repudiates his wife capriciously." "After quoting from the Quoran and the Prophet, Dr. Galwash concludes that ***"divorce is permissible in Islam only in cases of extreme emergency. When***

all efforts for effecting a reconciliation have failed, the parties may proceed to a dissolution of the marriage by 'Talaq' or by 'Khola'. . . . . Consistently with the secular concept of marriage and divorce, the law insists that at the time of Talaq the husband must pay off the settlement debt to the wife and at the time of Kholaa she has to surrender to the husband her dower or abandon some of her rights, as compensation." The learned Judge observed that *though marriage under the Muslim law is only a civil contract yet the rights and* ***responsibilities*** *consequent upon it are of such importance to the* ***welfare*** *of* ***humanity****, that a high degree of* ***sanctity*** *is attached to it.* But inspite of the ***sacredness*** *of the character of the marriage-tie, Islam recognizes the necessity, in exceptional circumstances, of keeping the way open for its dissolution*. Quoting in the judgment several Holy Quranic verses and from commentaries thereon by well-recognized scholars of great eminence, the *learned Judge expressed disapproval of the statement that "the whimsical and capricious divorce by the husband is good in law, though bad in theology"* ***and observed that such a statement is based on the concept that women were chattel belonging to men, which the Holy Quran does not brook.*** The correct law of talaq as ordained by the Holy Quran is that talaq must be for a reasonable cause and be preceded by attempts at reconciliation between the husband and the wife by two arbiters __ one from the wife's family and the other from the husband's; if the attempts fail, talaq may be effected." *(Emphesis supplied)*

उपरोक्त साठ के दशक से वर्ष 2017 में सायरा बानों के केस में मुस्लिम विवाह तथा विवाह विच्छेद के विषय पर भ्रांतियां दूर करने के न्यायिक निर्णय के पश्चात स्पष्ट है कि मुस्लिम विवाह में भी विश्वास,

चरित्र, अधिकार, कर्तव्य, समर्पण, आर्थिक व सामाजिक जिम्मेदारियां, सुरक्षा के साथ में ही समाज के ***welfare*** लिये अत्यन्त आवश्यक माना गया है। इन तथ्यों को पवित्र रिश्तों के रूप में माना जाये या नहीं, यह महत्वपूर्ण नहीं है। मुस्लिम विवाह अगर एक निजी (सिविल) अनुबन्ध भी माना जाये तब भी मुस्लिम विवाह के आवश्यक तत्व विश्वास, चरित्र, अधिकार, कर्तव्य, समर्पण, आर्थिक व सामाजिक जिम्मेदारियां न सिर्फ एक व्यक्ति पुरूष के हित में है बल्कि यह मुस्लिम महिलाओं के साथ सम्पूर्ण समाज के हित के लिये है। अतःमाननीय सर्वोच्च न्यायालय की संविधान पीठ द्वारा *समीम आरा* के प्रकरण से *सायरा बानों* के केस में जिन पद को उल्लेखित किया गया है, वह निम्न प्रकार से है :–

केरल उच्च न्यायालय द्वारा निम्न प्रश्नों, "Should muslim wives suffer this tyranny for all times? Should their personal law remain so cruel towards these unfortunate wives? Can it not be amended suitably to alleviate their sufferings? My judicial conscience is disturbed at this monstrosity. The question is whether the conscience of the leaders of public opinion of the community will also be disturbed." का जवाब अपने निर्णय में निम्न प्रकार से दिया गया :–

> "The learned Judge observed that though marriage under the Muslim law is only a civil contract yet the ***rights and responsibilities consequent upon it are of such importance to the welfare of humanity,*** that a high degree of sanctity is attached to it."

"The whole Quoran expressly forbids a man to seek pretexts for divorcing his wife, so long as she remains ***faithful*** and obedient to him, …"

The Islamic "law gives to the man primarily the faculty of dissolving the marriage, if the wife, by her ***indocility*** or her ***bad character***, renders the married life unhappy; but in the ***absence of serious reasons***, no man can justify a divorce, either in the eye of religion or the law

. If he ***abandons his wife*** or ***puts her away in simple caprice***, he draws upon himself the divine anger, for the curse of God, said the Prophet, rests on him who repudiates his wife ***capriiously***."

in some Muslim countries like Iraq __ that the husband must satisfy the court about the reasons for divorce.

However, Muslim law, as applied in India, has taken a course contrary to the spirit of what the Prophet or the Holy Quoran laid down and the same misconception vitiates the law dealing with the wife's right to divorce."

"After quoting from the Quoran and the Prophet, Dr. Galwash concludes that "***divorce is permissible in Islam only in cases of extreme emergency***."

When all efforts for effecting a reconciliation have failed, the parties may proceed to a dissolution of the marriage by 'Talaq'

The learned Judge observed that though marriage under the Muslim law is only a civil contract yet the rights and responsibilities consequent upon it are of such importance to the welfare of humanity, that a high degree of sanctity is attached to it. *(Emphesis supplied)*

अतः ऐसा नहीं है कि विश्वास, चरित्र, अधिकार, कर्तव्य, समर्पण, आर्थिक व सामाजिक जिम्मेदारियां के मूल तत्व मात्र हिन्दू या मुस्लिम विवाह के लिये आवश्यक है बल्कि यह मूल तत्व प्रत्येक धर्म, जाति व समाज में विवाह के आवश्यक तत्व माने जाते है। इन्हे समाज के ***welfare*** लिये अत्यन्त आवश्यक माना गया है।

माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा शादी/विवाह व परिवार पर विचार करते हुए *The Universal Declaration Of Human Rights, 1948* के अनुच्छेद–16 पर भी विचार किया गया। उपरोक्त घोषणा, 1948 के अनुच्छेद–16 का भाग संख्या–3 शादी/विवाह व परिवार तथा इस संबंध में राज्य के कर्त्तव्य के बारे में महत्वपूर्ण है। अनुच्छेद–16, 1948 निम्न प्रकार से हैः–

> **27.** Article 16 of the Universal Declaration of Human Rights, 1948 provides that:
>
> "1. Men and women of full age, without any limitation due to race, nationality or religion, have the right to marry and to found a family. They are entitled to equal rights as to marriage, during marriage and at it dissolution.
>
> 2. Marriage shall be entered into only with the free and full consent of the intending spouses.
>
> ***3. The family is the natural and fundamental group unit of society and is entitled to protection by society and the State." (Emphasis Supplied)***

माननीय सर्वोच्च न्यायालय के इसी निर्णय *श्रीमती इन्द्रा शर्मा,* में *International Covenant On Civil And Political Rights, 1966* के प्रावधान पर भी विचार किया गया है। अनुच्छेद–23 का

भाग 1 व 4 उपरोक्त विषय पर महत्वपूर्ण है। *ICCPR* का अनुच्छेद–23 निम्न प्रकार से है :–

> **(26)<u>Article 23</u>** of the International Covenant on Civil and Political Rights, 1966 (ICCPR) provides that:
>
> ***<u>"1. The family is the natural and fundamental group unit of society and is entitled to protection by society and the State.</u>***
>
> 2. The right of men and women of marriageable age to marry and to found a family shall be recognized.
>
> 3. No marriage shall be entered into without the free and full consent of the intending spouses.
>
> ***<u>4. States Parties to the present Covenant shall take appropriate steps to ensure equality of rights and responsibilities of spouses as to marriage, during marriage and at its dissolution. In the case of dissolution, provision shall be made for the necessary protection of any children." (Emphasis Supplied)</u>***

यहां यह उल्लेखनीय है कि शादी संबंधी व्यक्तिगत कानून हो, रूढ़ी हो या प्रथा हो, यह अपने आप में इस विषय से संबंधित सम्पूर्ण कानून (Self Contained) है। इन सभी कानून में स्पष्ट रूप से शादी व शारीरिक संबंध स्थापित करने लिये कौन व्यक्ति योग्य है, इसका उल्लेख मिलता है। इन विधि, रूढ़ी एवं प्रथाओं का उदेश्य न सिर्फ शादी के संबंधों को स्थापित करने से लगाकर शादी संबंध विच्छेद व उसके पश्चात के अधिकारों व ऐसे संबंधों से उत्पन्न संतान के लिये भी प्रावधान करते है, बल्कि सभी धर्म, समाज व जाति पर लागू विवाह संबंधी कानून सहित सभी कानूनों में इस प्रकार की सुव्यस्थित व्यवस्था

है। जहां विधि में सुव्यवस्थित व्यवस्था नहीं है, वहां हर जाति व धर्म में रूढ़ी व प्रथा से यह प्रावधान किये गये है कि शादी व शादी से अनुमति प्राप्त शारीरिक रिश्तों के संबंध में जानकारी यथा सम्भव अधिकतम व्यक्तियों को ऐसे रिश्ते के स्थापित होने के पूर्व से, व पश्चात में हर एक व्यक्ति को यथा सम्भव जानकारी प्राप्त हो सकें है। विवाह पंजीकरण संबंधी कानून, नियम व माननीय सर्वोच्च न्यायालय का श्रीमति सीमा के प्रकरण में दिये गये निर्णय से भी स्पष्ट है कि शादी के रिश्तों का अनिवार्य रूप से पंजीकरण होना चाहिये।

सैकडों वर्षो से एक सुस्थापित विवाह पद्वति विश्व भर में तथा लगभग सभी धर्म, जाति, समुदाय, क्षैत्र में होने के पश्चात भी विवाह पूर्व व विवाह पश्चात के शारीरिक संबंध असामान्य नहीं है। वास्तव में यह कहना उचित होगा कि ऐसे रिश्ते, विवाह पूर्व व विवाह पश्चात के शारीरिक संबंध, कभी भी किसी भी धर्म, जाति या क्षैत्र में नही हो ऐसा नहीं कहा जा सकता। विवाह पूर्व व विवाह पश्चात के शारीरिक संबंध के रहते हुए भी साधारणतया इन रिश्तों को व्यक्तियों, परिवार व समाज द्वारा स्वीकार नहीं किया गया। इसके साथ ही इस तथ्य को भी नजर अन्दाज नहीं किया जा सकता है कि, ऐसे रिश्तों को साधारणतया भारी विरोध का सामना समाज से नहीं करना पड़ा है। कई प्रकरणों में, ऐसे रिश्तों को परिवार ही नहीं बल्कि पत्नि द्वारा भी विरोध नहीं किये गये अथवा किन्ही कारणों से स्वीकार कर लिये गये। यह सब होते हुए भी विवाह पूर्व एवं विवाह पश्चात के रिश्ते किसी भी धर्म, जाति, समाज अथवा क्षैत्र में जीवन पद्वति के रूप में, सिवाय कुछ को छोड़ कर, स्वीकार नहीं किये गये है। अतः वर्तमान समय में

भी इस विषय में दो समानान्तर व्यवस्था अस्तित्व में है, एक शादी और दूसरा ''शादी के समान रिश्तें''।

माननीय सर्वोच्च न्यायालय के उपरोक्त निर्णयों पर विचार करने के पश्चात अधिनियम, 2005 में परिभाषित घरेलू नातेदारी में शामिल किये गये रिश्ते ***"शादी की प्रकृति में संबंध"*** के संबंध में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णयों की सहायता से अब विचार किया जाता है।

भारत वर्ष में ***"शादी की प्रकृति में संबंध"*** को मान्यता देने वाला कोई कानून नहीं था। अतः ऐसे रिश्तों में रहने वाली महिलाओं के वास्तव में कोई अधिकार नहीं थे, अतः इन रिश्तों में रहने वाली महिलाायें न्यायालय से कोई सहायता प्राप्त नहीं कर सकती थी। वर्ष 2005 के विधि से प्रथम बार ***"शादी की प्रकृति में संबंध"*** को विधिक मान्यता प्रदान करते हुए एक नया कानून, ''घरेलू हिंसा से महिलाओं की सुरक्षा अधिनियम, 2005'' भारत में बनाया गया। इस **अधिनियम, 2005 की धारा 2 (f) में ''पारिवारिक रिश्तों'' में अन्य रिश्तों के साथ में उन व्यक्तियों को भी सम्मलित किया गया जो *"शादी की प्रकृति में संबंध"* में एक साथ सम्मलित रूप से साथ घर में रहते है अथवा कभी रहते थे। अतः अधिनियम, 2005 द्वारा ''पारिवारिक रिश्तों'' में विधि द्वारा एक नया रिश्ता जोडा गया है।** पारिवारिक रिश्ता, विशेष रूप से शादी के समान रिश्ता क्या है इसको जानने के लिये यहां अधिनियम, 2005 की धारा 2 (एफ) व (एस) उल्लेखित करना आवश्यक है। अधिनियम, 2005 की धारा 2 (एफ) व (एस) निम्न प्रकार से हैः–

Section 2(f*) "domestic relationship" means a relationship between two persons who live or*

have, at any point of time, lived together in a shared household, when they are related by consanguinity, marriage, ***or through a relationship in the nature of marriage,*** adoption or are family members living together as a joint family";

Section 2(s) ***"shared household"*** means a household where the person aggrieved lives or at any stage has lived in a domestic relationship either singly or along with the respondent and includes such a household whether owned or tenanted either jointly by the aggrieved person and the respondent, or owned or tenanted by either of them in respect of which either the aggrieved person or the respondent or both jointly or singly have any right, title, interest or equity and includes such a household which may belong to the joint family of which the respondent is a member, irrespective of whether the respondent or the aggrieved person has any right, title or interest in the shared household." ***(emphasis Supplied)***

अधिनियम, 2005 के अध्याय 3 में संरक्षण अधिकारियों, सेवा प्रदताओं आदि की शक्तियां व अधिकार उल्लेखित है। अध्याय 4 में पीड़िता किस प्रकार से सहायता प्राप्त करने के लिये संबंधित मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रार्थना पत्र प्रस्तुत कर सकती है व उसके पश्चात किस प्रकार से विभिन्न प्रकार की सहायताओं को प्रदान करने के लिये प्रक्रिया पुरी करने व आदेश उल्लेखित किये गये है। इस प्रक्रिया में परामर्श, कल्याण विशेषज्ञ की सहायता, कार्यवाही को बंद कमरें में किया जाना, शादी गृहस्थी में निवास करने का अधिकार के प्रावधान के साथ में धारा 18 के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के संरक्षण आदेश, धारा 19 के तहत विभिन्न प्रकार के निवास संबंधित आदेश, धारा 20 के तहत विभिन्न आर्थिक सहायता के प्रावधान, धारा 21 के तहत

अभिरक्षा आदेश, धारा 22 के अन्तर्गत प्रतिकार (मुआवजा) आदेश के साथ ही धारा 23 के अन्तर्गत आवश्यकता होने पर एक पक्षीय आदेश देने के प्रावधान बनाये गये है। अधिनियम, 2005 के अध्याय 5 में संरक्षण अधिकारी व सेवा प्रदाता के नियुक्ति व अधिनियम, 2005 के प्रावधानों का उल्लघंन व अपराध कारित करने पर अपनायें जाने वाली प्रक्रिया प्रदान की गई है। अधिनियम, 2005 के अन्तर्गत आवश्यक नियम, ''घरेलू हिंसा से महिलाओं का सरंक्षण नियम, 2006'' बनाये गये है।

अधिनियम, 2005 के अध्यन से में यदपि ***"शादी की प्रकृति में संबंध"*** में रहने वाली महिलाओं के अधिकार व ऐसी महिलाओं को कुछ विधिक सहायता व कुछ सुरक्षायें प्रदान की गई है परन्तु अधिनियम, 2005 के सम्पूर्ण पठन से ही नहीं बल्कि इस विषय पर भारत के सर्वोच्च न्यायलय द्वारा विस्तार से विचार करने के पश्चात जो निर्णय दिये गये है उनसे भी प्रतीत होता है कि, ***अधिनियम, 2005 एक अपूर्ण विधि (कानून) है।*** आयोग इस संबंध में आगे विचार कर रहा है।

जैसा कि सभी व्यक्तिगत कानून (Personal Law) तथा भारत में बनाये गये विवाह संबंधी सभी प्रकार के कानूनों में व सर्वोच्च न्यायालय के अनेकों निणयों के पूर्व में दिये गये निर्णयों तथा हाल ही में मानव रिश्तों में स्वतंत्रता के महत्व पर सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिये गये निर्णयों से स्पष्ट है कि शादी/विवाह व इससे होने वाले परिणामों का सैकडों वर्षो का अनुभव शादी/विवाह के रिश्तों के महत्व को स्वीकार कराता है। शादी के रिश्तों में आपसी भावनात्मक संबंध, आत्मीय संबंध, व्यावहारिक संबंध, आदर, समर्पण, प्रेम, विश्वास जैसे मूल तत्व की है। परन्तु *अनुभव बताता है कि हर काल में शादी के*

रिश्तों के दौरान महिलाओं पर अत्याचार हुआ है। इन अत्याचारों को रिति–रिवाजों का नाम दिया जाता है। शादी के लिये पवित्र बन्धन या निजी अनुबन्ध अथवा वैधानिक रिश्तों में अनेकों बुराईयों को जोड़ कर रिति–रिवाजों का नाम दे दिया गया है व इन रिति–रिवाजों को विवाह सम्पन्न करने एक आवश्यक भाग बना दिया गया। इस कारण से बाल–विवाह, विधवा पुर्नविवाह पर रोक, सती प्रथा, दहेज, दहेज के कारण से प्रताड़ित करना, दहेज हत्या, बालिका भ्रूण हत्या, महिलाओं (वधू) हत्या और वह भी जघन्य तरीकों से जलाकर मार देना परिणाम है। यही नहीं बल्कि अर्न्तजातिय/अर्न्तधर्म/सहगौत्र विवाह संबंध के विरोध में समूह बनाकर द्वारा **''खाप पंचायत''** बनाई गई व स्वैच्छा से शादी करने वालों की हत्या करने को **''ऑर्नर किलिंग''** नाम तक दे दिया गया। इन सभी बुराईयों को सख्ती से समाप्त करने के लिये देश में समय–समय पर नये कानून बनाये जाते है। जिनमें धारा 498 (ए), 125 सी.आर.पी.सी. व इसके अलावा अन्य नये प्रावधान ही नहीं बनाये गये, अपितु ऐसे अपराधों के त्वरित निर्णय हेतु भारत में विशेष न्यायालय भी बनाये गये/घोषित किये गये। घरेलू हिंसा व महिलाओं के प्रति अपराधों की रोकथाम हेतु न सिर्फ सरकार व प्रशासन द्वारा कार्य किया जा रहा है। बल्कि भारत के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा भी पुरी सख्ती के साथ इन पारिवारिक व पारिवारिक अपराधिक विवादों के प्रकरण पर ध्यान दिया जा रहा है। प्रश्न स्वाभाविक है कि क्या इस पद में अंकित उपरोक्त कारणों से व इससे संबंधित अन्य कारणों से शादी की व्यवस्था के औचित्य पर प्रश्न चिन्ह लगाये जा सकता है और सफल शादी के करोड़ों उदाहरणों को गलत

व्यक्तियों के द्वारा किये गये अत्यन्त गम्भीर व गम्भीरतम अपराधों के कारण से समाप्त किये जाने के बारे में सोचा जा सकता है।

वैवाहिक विषय के विभिन्न कानूनों व विशेष रूप से हिन्दू विवाह अधिनियम में लगातार तथा मुस्लिम विवाह के संबंध में हाल ही में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्णय कर कई कठिनाईयों को दूर किया गया। विवाह में एक गम्भीर आरोप लगाये जाते है कि एक बार विवाह होने के पश्चात पति–पत्नि का रिश्ता पुरी तरिके से मृत हो चुका है अथवा समाप्त हो चुका है तब भी विधि में ऐसा प्रावधान नहीं है कि पति–पत्नि स्वैच्छा से संबंध विच्छेद कर सके। इस गम्भीर परेशानी को दूर करने के लिये हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 में धारा 13 (बी) जोड़ी जाकर इस परेशानी को दूर किया जा चुका है। इस प्रावधान से पति–पत्नि स्वैच्छा से संबंध विच्छेद कर सकते है। इस प्रावधान में किसी प्रकार का आरोप–प्रत्यारोप व कारण भी बताने की आवश्यकता नहीं है। परन्तु पति–पत्नि में से कोई एक पक्ष इस प्रावधान के फायदें में रूकावट डाल सकता है। इस समस्या के निदान हेतु लॉ कमीशन ऑफ इण्डिया द्वारा अपनी रिपोर्ट संख्या 71, अप्रेल 07,1978 यानि अब से 40 वर्ष पूर्व *Irretrievable Breakdown of Marriage* को विवाह विच्छेद का एक कारण माने जाने व इस हेतु विवाह अधिनियम में उचित संशोधन करने का सुझाव भी प्रस्तुत किया गया। माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा भी न्यायिक निर्णयों में ऐसे सुधार करने का मन्तव्य प्रकट किया गया। लॉ कमीशन ऑफ इण्डिया द्वारा अपनी रिपोर्ट संख्या 217, मार्च ,2017 में पुनः *Irretrievable Breakdown of Marriage* को विवाह विच्छेद का आधार बनाकर विधि में सुधार करने के अनुशंषा की गई। अतः, अगर इस अनुशंषा को

स्वीकार कर लिया जाता है व शादी के समान रिश्तों को शादी के रूप में मान्यता प्रदान कर शादी के समान रिश्तों के लिये प्रावधानों को लागू किये जाने की महिलाओं के लगभग सभी अधिकारों की पूर्ण सुरक्षा हो सकती है। अर्थात शादी के समान रिश्तें के लिये स्त्री–पुरूष की योग्यता, अयोग्यतायें, इस रिश्तें के लिये प्रक्रिया निश्चित कर, रिश्ते का पंजीयन की प्रक्रिया बनाई जाकर महिलाओं के अधिकारों की रक्षा की जा सकती है। मूल रूप से विवाह को एक बन्धन समझ कर विवाह के रिश्ते को समाप्त करने की कठिनाईयों के कारण से अगर शादी के समान रिश्ते का विकल्प चुना जाता है तो जो रिश्ते बन्धन बन चुके है उन्हे समाप्त करना ही समस्या का उचित उपचार है न की शादी के रिश्ते जो बन्धन बन चुके है उन्हे जारी रखते हुए शादी के समान रिश्ते रखने के लिये प्रोत्साहित करना अथवा ऐसे रिश्ते की विधिक मान्यता से महिलाओं को भ्रमित होने देना कोई समस्या का अन्त नहीं है बल्कि समस्या को बढ़ावा देना है। यहां यह भी उल्लेखनीय है कि *Common Law Marriage* में भी विवाह हेतु शर्ते है तथा विवाह संबंध विच्छेद करने के लिये कारण होने चाहिये। ***आयोग के समक्ष इस प्रकार का एक भी मत प्राप्त नहीं हुआ व ना आयोग की जानकारी में आया है जिससे यह पता चल सके कि पुरूषों द्वारा ऐसे रिश्तों की महिलाओं को बिना किसी कारण त्यागना उचित बताया जा सके।***

क्या अपराधियों द्वारा घरेलू हिंसा किये जाने के कारण से शादी/विवाह जैसी पद्धति/परम्परा/व्यवस्था का विकल्प ढूढ़े जाने की जरूरत है ? क्या उपरोक्त सभी कारण अधिनियम, 2005 में परिवार की परिभाषा में ***"शादी की प्रकृति में संबंध"*** को सम्मलित करने

से ही महिलाओं के अधिकारों की सुरक्षा हो सकती है ? अगर शादी एक व्यवस्था है, जिसके उद्धेश्य हर व्यक्तिगत विधि में, रूढ़ी में व प्रथा में तथा उसके पश्चात तमाम व्यक्तिगत विधियों में जो संविधान द्वारा सुरक्षित है में होने के पश्चात भी कुछ व्यक्तियों द्वारा शादी के रिश्ते के दौरान अत्याधिक घृणित अपराध करने से विवाह पद्धति को असफल करार दिया जा सकता है ? यह विचारणीय विषय है।

शादी/विवाह के संबंध में सुखद व दुखद परिणामों को ध्यान में रखते हुए यह विचाराणीय है कि, क्या विधि द्वारा *शादी के समान रिश्तों* को मान्यता देने से ऊपर वर्णित अपराध, अधिकांश, अथवा कुछ समाप्त हो जाते है ? क्या *शादी के समान रिश्तों* में रहने वाली महिलायें भी कई इस नये रिश्ते से और अधिक प्रताड़ित, असुरक्षित, अपमानित नहीं होगी ? क्या महिलाओं की गरिमा मात्र रहवास का अधिकार, गुजारा भत्ता व बच्चों की अभिरक्षा तक ही सिमित है। यह विचाराणीय विषय है।

क्योकि अधिनियम, 2005 द्वारा ***"शादी की प्रकृति में संबंध"*** को ''पारिवारिक रिश्ता'' घोषित तो कर दिया गया है, परन्तु क्या पारिवारिक रिश्ते रहवास का अधिकार, गुजारा भत्ता प्राप्त करने का अधिकार व बच्चों की अभिरक्षा तक ही सिमित होते है ? क्या महिलाओं को उनकी प्रतिष्ठा, गरिमा व मान–सम्मान उपरोक्त तीन लाभ ही प्राप्त है ?

मानव अधिकार आयोग द्वारा व्यक्ति की स्वतंत्रता, व्यक्ति की सोच, व्यक्ति की पसन्द व नापसन्द, व्यक्ति द्वारा अपने वैवाहिक जीवन के भागीदार को चुनने के अधिकार की रक्षा करने के अधिकार को

ध्यान में रखते हुए इस विषय पर विचार किया जा रहा है कि अधिनियम, 2005 से महिलाओं को ''शादी के समान रिश्तों'' में रहते हुए परिवार, परिवार के सदस्यों के रूप में एक ही घर में रहते आमजन के सामने विवाहित की तरह रहते हुए दिखाने के पश्चात, परिवार वृद्धि के पश्चात अधिनियम, 2005 से महिलाओं को क्या विशेष लाभ प्राप्त हो रहे है और महिलायें इस रिश्ते से क्या खो रही है ?

सैकडों वर्षो से स्थापित विवाह व्यवस्था, जिसके गुणों का वर्णन सौ वर्ष से अधिक समय से न्यायिक निर्णयों में किया जा चुका है तथा जिन देशों स्वयं को (Developed Nation) कहा जाता है, उन देशों में ही शादी के समान रिश्तों में न्यायालयों द्वारा अन्य न्यायिक सहायता तो दूर गुजारा भत्ता दिये जाने में भी मतभेद है फिर भी **भारत में** ''शादी के समान रिश्तों'' **को मान्यता दिये जाने के पीछे अगर यह उद्धेश्य है कि शादी के समान रिश्तों में रहने वाली महिलाओं को सभी प्रकार के, शारिरीक, मानसिक, आर्थिक व सुरक्षा प्रदान की जाये तब क्यो नहीं शादी के समान रिश्तों को भी शादी में ही सम्मलित कर लिया गया ? अगर शादी के समान रिश्तों को शादी के रिश्ते में सम्मलित कर लिया जाता है तो स्वतः अधिनियम, 2005 में महिलाओं को जो अधिकार अथवा लाभ दिये गये है, वह स्वतः अधिनियम, 2005 के बिना ही प्राप्त हो जाते है। जबकि इसके विपरित अधिनियम, 2005 से निश्चित रूप से शादी के समान रिश्तों से अत्यधिक भ्रांतियां उत्पन्न हो गई है।** न्यायिक निर्णयों से ही स्पष्ट है कि अधिनियम, 2005 में रही अनेको कमियों को न्यायिक निर्णयों द्वारा पुरा करने का प्रयत्न किया गया है। परन्तु इन निर्णयों के पश्चात भी **यह स्पष्ट नहीं है कि पूर्णतया विश्वसनीय, समर्पित, तमाम प्रकार की ऐसे रिश्तों की**

जिम्मेदारियों को स्वीकार करने वाली महिलाओं को पुरूषों द्वारा त्याग करने के पुरूषों को अधिकार देने से महिलाओं को क्या लाभ प्राप्त हुआ ? यहां पुनः उल्लेखित करना आवश्यक है कि महिलाओं का मान सम्मान विश्वास को धोखा देना के बदले में अपमान, गुजारा भत्ता, रहवास का अधिकार, बच्चों की अभिरक्षा इत्यादि जो भी प्रावधान अधिनियम, 2005 में बनाये गये महिलाओं को उपरोक्त पहुंची हुई गम्भीर चोटों का ना तो इलाज है ना ही क्षतिपूर्ति। आयोग के समक्ष पुरूष द्वारा महिला को ''**शादी के समान रिश्तों**'' संबंध बनाकर स्वैच्छाचारी तरीके से त्यागने के प्राप्त इस अधिकार के पक्ष में कोई भी तर्क प्रस्तुत नहीं हुआ है।

शादी के रिश्ते को अगर किसी धर्म से नहीं जोड़ा जाये व निजी अनुबन्ध भी माना जाये तो क्या इन रिश्तों में विश्वास, चरित्र, अधिकार, कर्तव्य, समर्पण, आर्थिक व सामाजिक जिम्मेदारियां जैसे मूल तत्वों को हटाया जा सकता है ? क्या इन मूल तत्वों को हटाने से महिलाओं को लाभ प्राप्त होगा तथा पुरूषों द्वारा महिलाओं को स्वैच्छाचारी तरीके से त्यागने के अधिकार से उपरोक्त मूल तत्वों से भी महत्वपूर्ण है। आयोग पुनः उल्लेखित करना चाहेगा कि आयोग माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निजता के अधिकार व व्यक्तिगत स्वतंत्रता के विषय पर अत्यन्त महत्वपूर्ण व सारगर्भित निर्णय पारित किये गये है। आयोग द्वारा यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि शादी के संबंध में, निजता के अधिकार के बावजूद ही नहीं यौन संबंधों के लिये माननीय सर्वोच्च न्यायालय के प्रगतिशील निर्णयों के पश्चात संविधान पीठ द्वारा *सायरा बानों* के प्रकरण में महिलाओं के अधिकारों के संबंध में जिन टिप्पणीयों को मान्यता दी गई है, वह भी व्यक्ति के

किसी भी अधिकार का हनन किये बगैर ही नहीं बल्कि व्यक्तियों के अधिकारों की सुरक्षा करते हुए सुव्यवस्थित व व्यक्ति, पति–पत्नि, परिवार, समाज, सामाजिक सुरक्षा, सामाजिक विकास के लिये अत्यन्त आवश्यक बाध्यकारी दिशा–निर्देश है। ***आयोग विधि के निर्मातों व विचारकों से अनुरोध करता है कि शादी व शादी के समान दो समानान्तर रिश्तों को किसी धर्म, जाति अथवा समाज के विषय से ऊपर उठकर मानव हितों से संबंधित विषय के रूप में देखेगें तो पायेगें कि माननीय न्यायालयों द्वारा कम से कम वर्ष 1878 (फरजून हुसैन के प्रकरण) के समय से किसी भी धर्म में, धार्मिक आधार पर शादी के रिश्ते की विशेषताओं का वर्णन नही कर शादी के रिश्तों में धर्म, जाति, समाज से भी ऊपर उठ कर जो आवश्यक तत्व है उन्हे आवश्यक घोषित किया गया है।*** किसी भी न्यायिक निर्णय में यह घोषित नहीं किया गया है कि शादी के रिश्तों, के कुछ तत्व कुछ धर्म व कुछ जाति पर ही लागू होगें व कुछ अन्यों पर। *अनेकों बार, इस विषय पर एक धर्म की परिपाठी अथवा रिति–रिवाज पर टिप्पणी की जाती है तब इसे धर्म संबंधित विषय समझ लिया जाता है। जबकि धर्मनिरपेक्ष रूप से शादी में व शादी के समान रिश्तों में उपरोक्त माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों में वर्णित आवश्यक तत्व होने चाहिये।* माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा शादी के जो आवश्यक तत्व बताये गये है, वह ''***शादी के समान रिश्तों***''में नहीं होने के पक्ष में व इसके नहीं होने के फायदें आयोग के समक्ष प्रस्तुत नहीं हुए है। यहां यह उल्लेख करना अत्यन्त आवश्यक है कि शादी के समान रिश्तों के संबंध में जो भी प्रकाशित सामग्री उपलब्ध होती है उनमें व्यक्ति व व्यक्तियों की स्वतंत्रता व व्यक्तियों की निजता, व्यक्तियों के संवैधानिक

स्वैच्छा से निर्णय लेने व स्वैच्छा से अपनी इच्छा से जिस किसी के साथ शारिरीक संबंध बनाने है उनके पक्ष में अनेकों प्रकार से तर्क दिये गये है, परन्तु ***पुरूष व महिला को पूर्णतया स्वैच्छाचारी तरीके से बिना किसी उचित कारण, बिना किसी प्रकार के समझौते के प्रयत्न किये, बिना दूसरे पक्ष को सूचना तक दिये किसी भी स्थिति में छोड़ देने के ओचित्य के संबंध में तर्क प्राप्त नहीं हुए है।*** वास्तव में और सही मायने में कम से कम शताब्दी से अधिक समय से व्यक्ति, घर, परिवार, समाज ही नहीं बल्कि न्यायालय द्वारा महिलाओं के प्रति जिस व्यवहार की कड़ी से कड़ी आलोचना की गई वह अधिकार ***"शादी के समान रिश्ते"*** से स्त्री और पुरूष दोनों को दिये गये, परन्तु निश्चित रूप से इसका सारा भार और पीड़ा मात्र महिलाओं के लिये है, इसका प्रमाण अधिनियम, 2005 से भी प्रमाणित है। ***अधिनियम, 2005 में पीड़ित पक्ष मात्र महिला है***। स्वाभाविक है, अधिनियम, 2005 में पीड़ित व्यक्ति मात्र स्त्री जो कि अधिनियम, 2005 की धारा 2 (a) से स्पष्ट है और किसी पुरूष को इस पर आपत्ति भी नहीं है। अतः महिलाओं की पीड़ा समाप्त करने के स्थान पर महिलाओं के निश्चित रूप से पीड़ित होने पर उन्हे भरण–पोषण, निवास, बच्चों की अभिरक्षा के साथ में घरेलू हिंसा में सहायता प्रदान करने में ऐसे प्रावधान बनाये गये है जिससे पुरूष को महिला को छोड़ कर चले जाने पर घरेलू हिंसा का दोषी नहीं माना जा सकता है। पैसों के बल पर भरण–पोषण व निवास देकर पुरूष महिला को जो कुछ दे रहा है उससे महिला के मामूली से अधिकारों के नाम पर मूल तत्व से वंचित करने पर गलत करने वाले को गलती का फायदा पहुंचाने का प्रावधान मात्र है। जो कि विधि का स्थापित सिद्धान्त की गलती करने वाले को उसकी गलती

का फायदा *(Wrongdoer cannot take benefit of his own wrong)* नहीं दिया जा सकता, का उल्लघंन है।

क्या अति प्रगतिशील होने के नाम पर महिलाओं को विवाह/शादी से जो अधिकार प्राप्त है क्या उन्हे भी छीना जा रहा है। यह महत्वपूर्ण महिलाओं के मानव अधिकार का विषय है।

अधिनियम, 2005 में निम्नलिखित कमियां स्पष्ट रूप से है :–

1. ***"शादी की प्रकृति में संबंध"*** के स्थापित करने हेतु पक्षकारान की कोई योग्यता अधिनियम, 2005 में नहीं है।

2. ***"शादी की प्रकृति में संबंध"*** बनानें के लिये क्या प्रक्रिया होगी? यह अधिनियम, 2005 में नहीं है।

3. ***"शादी की प्रकृति में संबंध"*** के समय में कितने स्थापित किये जा सकते है ? इसका कोई प्रावधान अधिनियम, 2005 में नहीं है। विशेष रूप से जब बहुविवाह प्रथा का प्रचलन भी हो।

4. ***"शादी की प्रकृति में संबंध"*** में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों के अनुसार जब विवाहिता अपने पति के विवाहेत्तर रिश्तों के कारण से मात्र विवाह विच्छेद न्यायालय के मार्फत प्राप्त कर सकती है व ***"शादी की प्रकृति में संबंध"*** में विवाह विच्छेद का कोई प्रावधान नहीं होने के कारण से किस प्रकार से यह ज्ञात होगा की एक व्यक्ति एक समय में कितने *शादी के समान रिश्तें* स्थापित कर सकता है व कब और किस प्रकार से महिला से ऐसा रिश्ता समाप्त किया जा सकता है। उक्त प्रभावित/पीड़ित महिलाओं को भी किस प्रकार से ज्ञात होगा कि उसका रिश्ता समाप्त हो चुका है, इसका प्रावधान अधिनियम, 2005 में नहीं है।

5. विवाह जैसे आमजन के सामने होने वाले रिश्तों का पंजीकरण आवश्यक होने के पश्चात भी व माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा *श्रीमती सीमा बनाम अश्वनी कुमार* के निर्णय दिनांक 14.02.2006 में विवाह पंजीकरण किया जाना आवश्यक घोषित करने के पश्चात भी ***"शादी की प्रकृति में संबंध"*** के पंजीकरण हेतु कोई प्रावधान अधिनियम, 2005 में नहीं है।

6. ***"शादी की प्रकृति में संबंध"*** कौन किन कारणों से समाप्त कर सकता है व किस विधि से समाप्त कर सकता है ? इसका कोई उल्लेख अधिनियम, 2005 में नहीं है।

7. ***"शादी की प्रकृति में संबंध"*** जो अपने आप में अत्यन्त विशिष्ट प्रकार के रिश्ते होते है, के भंग करने, ऐसे रिश्तें के समाप्त हो जाने की घोषणा करवानें, इत्यादि, इन विषयों से संबंधित किन न्यायालयों में क्या कार्यवाही की जा सकती है ? इसका उल्लेख अधिनियम, 2005 में नहीं है।

8. ऐसे रिश्तों से उत्पन्न हुए बच्चों पर क्या कोई मानसिक दबाव या कुण्ठा हो सकती है। इस संबंध में विचार किया गया हो अधिनियम, 2005 से प्रतीत नहीं होता है। ना इस संबंध में विचार किया जाना प्रतीत हो रहा है कि ऐसे बच्चों के बाल्यकाल व छात्र जीवन की मानसिकता पर क्या प्रभाव पडेगा ? क्या स्त्री/पुरूष द्वारा एक समाज बनाने के निर्णय लिये जाने के पश्चात भी इन स्त्री/पुरूष द्वारा समाज तो बनाया जायेगा, परन्तु सामाजिक जिम्मेदारी नकारना इन रिश्तों का स्वाभाविक परिणाम नहीं होगा।

कम से कम उपरोक्त कमियां स्पष्ट रूप से अधिनियम, 2005 में है व इसी कारण से माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिनियम, 2005 में प्रयोग की गई धारणा ***"शादी की प्रकृति में संबंध"*** की व्याख्या करते समय ***"शादी की प्रकृति में संबंध"*** को वास्तव में लगभग शादी ही

घोषित की जाकर अधिनियम, 2005 में रखी गई कमियों की पूर्ति करते हुए *डी. वेणुस्वामी व इन्द्रा शर्मा* के प्रकरण में शादी की योग्यता के वह प्रावधान जो कि व्यक्तिगत कानूनों में व्यक्तियों पर लागू है, को ***"शादी की प्रकृति में संबंध"*** के लिये एक आवश्यक भाग भी मान लिया गया। उदाहरण स्वरूप माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिनियम, 2005 में दिये गये ***"शादी की प्रकृति में संबंध"*** की व्याख्या करते समय निम्नलिखित तथ्यों को ***"शादी की प्रकृति में संबंध"*** में आवश्यक अंग मान कर अधिनियम, 2005 में वास्तव में रही कमी को दूर किया गया है। इन कमियों को दूर करने के पश्चात महिलाओं के अधिकारों संबंधित अनेकों कमियां अधिनियम, 2005 में है। जैसे कि *डी. वेणुस्वामी* माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इस विषय पर जो टिप्पणीयां की गई है, उनका पुनः उल्लेख यहां करना उचित होगा :–

> 20. Having noted the relevant provisions in The Protection of Women from Domestic Violence Act, 2005, we may point out that the expression `domestic relationship' includes not only the relationship of marriage but also a relationship `in the nature of marriage'. ***The question, therefore, arises as to what is the meaning of the expression `a relationship in the nature of marriage'. Unfortunately this expression has not been defined in the Act.*** Since ***there is no direct decision of this Court on the interpretation of this expression*** we think it necessary to interpret it because a large number of cases will be coming up before the Courts in our country on this point, and hence an authoritative decision is required.
>
> 22. It seems to us that in the aforesaid Act of 2005 ***Parliament has taken notice of a new social phenomenon which has emerged in our country***

known as live-in relationship. This new relationship is still rare in our country, and is sometimes found in big urban cities in India, but it is very common in North America and Europe. It has been commented upon by this Court in S. Khushboo vs. Kanniammal & Anr. (2010) 5 SCC 600 (vide para 31).

24. ***In USA*** the expression `palimony' was coined which means grant of maintenance to a woman who has lived for a substantial period of time with a man without marrying him, and is then deserted by him (see 'palimony' on Google). The first decision on palimony was the well known decision of the California Superior Court in Marvin vs. Marvin (1976) 18 C3d660. This case related to the famous film actor Lee Marvin, with whom a lady Michelle lived for many years without marrying him, and was then deserted 1 by him and she claimed palimony. Subsequently in many decisions of the Courts in USA, the concept of palimony has been considered and developed. The US Supreme Court has not given any decision on whether there is a legal right to palimony, but there are several decisions of the Courts in various States in USA. These Courts in USA have taken divergent views, some granting palimony, some denying it altogether, and some granting it on certain conditions. Hence in USA the law is still in a state of evolution on the right to palimony.

25. Although there is no statutory basis for grant of palimony in USA, the Courts there which have granted it have granted it on a contractual basis. Some Courts in USA have held that there must be a written or oral agreement between the man and woman that if they separate the man will give palimony to the woman, while other Courts have held that if a man and woman have lived together for a substantially long period without getting married there would be deemed to be an

implied or constructive contract that palimony will be given on their separation.

26. In Taylor vs. Fields (1986) 224 Cal. Rpr. 186 the facts were that the plaintiff Taylor had a relationship with a married man Leo. After Leo died Taylor sued his widow alleging breach of an implied agreement to take care 1 of Taylor financially and she claimed maintenance from the estate of Leo. The Court of Appeals in California held that the relationship alleged by Taylor was nothing more than that of a married man and his mistress. It was held that the alleged contract rested on meretricious consideration and hence was invalid and unenforceable. The Court of Appeals relied on the fact that Taylor did not live together with Leo but only occasionally spent weekends with him. There was no sign of a stable and significant cohabitation between the two.

28. ***Thus, there are widely divergent views of the Courts in U.S.A. regarding the right to palimony. Some States like Georgia and Tennessee expressly refuse to recognize palimony agreements***

33. In our opinion a 'relationship in the nature of marriage' is akin to a common law marriage. Common law marriages require that although not being formally married :- (a) The couple must hold themselves out to society as being akin to spouses. (b) They must be of legal age to marry. (c) They must be otherwise qualified to enter into a legal marriage, including being unmarried. (d) They must have voluntarily cohabited and held themselves out to the world as being akin to spouses for a significant period of time. (see 'Common Law Marriage' in Wikipedia on Google) In our opinion a 'relationship in the nature of marriage' under the 2005 Act must also fulfill the above requirements, and in addition the parties must have lived together in a 'shared household' as

> defined in Section 2(s) of the Act. Merely spending weekends together or a one night stand would not make it a 'domestic relationship'. 34. In our opinion not all live in relationships will amount to a relationship in the nature of marriag8e to get the benefit of the Act of 2005. To get such benefit the conditions mentioned by us above must be satisfied, and this has to be proved by evidence. If a man has a 'keep' whom he 1 maintains financially and uses mainly for sexual purpose and/or as a servant it would not, in our opinion, be a relationship in the nature of marriage.
>
> 35. No doubt the view we are taking would exclude many women who have had a live in relationship from the benefit of the 2005 Act, but then it is not for this Court to legislate or amend the law. Parliament has used the expression `relationship in the nature of marriage' and not `live in relationship'. ***The Court in the grab of interpretation cannot change the language of the statute. (Emphasis Supplied)***

माननीय सर्वोच्च न्यायालय की डी.वेणुस्वामी के प्रकरण में किये गये विचारों से भी आयोग के इस मत को बल मिलता है कि अधिनियम, 2005 में कई कमियां है और माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इन कमियों की ओर ध्यान आकृष्ट किया है। यही नहीं बल्कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह भी पाया है कि ***शादी के समान रिश्तों (लिव–इन–रिलेशनशिप) के विषय पर अब तक विदेशों में भी कोई स्पष्ट कानून नहीं बनाये जा सके है*** जबकि भारत में विदेशी संस्कृति से इस विषय पर ज्ञान प्राप्त करने का प्रयत्न किया जा रहा है। विधि निर्माताओं को इन तथ्यों को ध्यान में रखकर मानव संबंधों से संबंधित अत्यन्त संवेदनशील विषय पर विचार किया जाना चाहिये।

चूंकि अधिनियम, 2005 में नये रिश्ते, शादी के समान रिश्ते, को मान्यता को प्रदान की गई है परन्तु अधिनियम, 2005 में स्पष्टता नहीं होने पर डी.वेणुस्वामी के निर्णय के पश्चात माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विषय पर *श्रीमति इन्द्रा शर्मा* के प्रकरण में अधिनियम, 2005 के संबंध में निम्नलिखित टिप्पणीयां की है :–

RELATIONSHIP IN THE NATURE OF MARRIAGE:

33. Modern Indian society through the DV Act recognizes in reality, various other forms of familial relations, shedding the idea that such relationship can only be through some acceptable modes hitherto understood. Section 2(f), as already indicated, deals with a relationship between two persons (of the opposite sex) who live or have lived together in a shared household when they are related by:

a) Consanguinity

b) Marriage

c) Through a relationship in the nature of marriage

d) Adoption

e) Family members living together as joint family.

34. The definition clause mentions only five categories of relationships which exhausts itself since the expression “means”, has been used. When a definition clause is defined to “mean” such and such, the definition is prima facie restrictive and exhaustive. Section 2(f) has not used the expression “include” so as to make the definition exhaustive. It is in that context we have to examine the meaning of the expression “relationship in the nature of marriage”.

35. We have already dealt with what is "marriage", "marital relationship" and "marital obligations". Let us now examine the meaning and scope of the expression *"relationship in the nature of marriage"* which falls within the definition of Section 2(f) of the DV Act. Our concern in this case is of the third enumerated category that is ***"relationship in the nature of marriage" which means a relationship which has some inherent or essential characteristics of a marriage though not a marriage legally recognized***, and, hence, a comparison of both will have to be resorted, to determine whether the relationship in a given case constitutes the characteristics of a regular marriage.

36. *Distinction between the relationship in the nature of marriage and marital relationship has to be noted first. Relationship of marriage continues, notwithstanding the fact that there are differences of opinions, marital unrest etc., even if they are not sharing a shared household, being based on law. But live-in-relationship is purely an arrangement between the parties unlike, a legal marriage.* ***Once a party to a live-in-relationship determines that he/she does not wish to live in such a relationship, that relationship comes to an end.*** *Further, in a relationship in the nature of marriage, the party asserting the existence of the relationship, at any stage or at any point of time, must positively prove the existence of the identifying characteristics of that relationship, since the legislature has used the expression "in the nature of".* ***(Emphasis Supplied)***

श्रीमति इन्द्रा शर्मा के प्रकरण में दिये गये निर्णय के पद संख्या 36 में शादी व ***"शादी की प्रकृति में संबंध"*** व *लिव–इन–रिलेशनशिप* रिश्ते में जो अन्तर दर्शाया गया है वह अत्यन्त महत्वपूर्ण है। *शादी में पक्षकारान में मतभेद होने से ही नहीं परन्तु वैवाहिक संबंध बिगड़ जाने*

पर व उसके पश्चात पक्षकारान का अलग रहना व अलग मकान में रहने से भी शादी का संबंध समाप्त नहीं हो जाता है। आयोग यहां उल्लेखित करना चाहेगा कि *शादी के संबंध विच्छेद विधि अनुसार स्थापित प्रक्रिया से ही किये जा सकते है।* जबकि ***"शादी की प्रकृति में संबंध"*** में दोनों पक्षकारन द्वारा अथवा एक भी पक्षकार द्वारा, वर्तमान कानून के रहते, बिना दूसरे पक्ष को किसी प्रकार की सूचना दिये ही शादी के समान रिश्ते को समाप्त किया जा सकता है। *अर्थात एक गलत कार्य करने वाला व्यक्ति अपनी गलती का फायदा दूसरे पक्ष को शारिरीक, मानसिक, आर्थिक, सम्मान जैसे अनेकों प्रकार की पीड़ा दे सकता है व महिला को परित्याक्ता बनाकर उसी के सामने अन्य महिलाओं के साथ शादी के समान रिश्ते बनाकर रह सकता है।* अब तक जो भी पठन सामग्री प्राप्त हो सके, उसमें पुरूष को दिये गये इस अधिकार से महिलाओं की रक्षा किस प्रकार से हो सकती है उल्लेख नहीं है। वास्तव में अधिनियम, 2005 में ***"शादी की प्रकृति में संबंध"*** की मान्यता पुरूष को महिलाओं के साथ खिलवाड़ करने, प्रताड़ित करने व अनेकों प्रकार की हानि पहुंचानें जिनका कोई उपचार नहीं है के अधिकार प्रदान करते है। सम्पन्न व्यक्तियों द्वारा महिलाओं के भरण–पोषण व रहवाश देकर छोड़ने का अधिकार को विधिक मान्यता देने के विषय पर साधारणतया मौन ही उत्तर समझा गया है।

शादी के रिश्तों का महत्व समझते हुए माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा *श्रीमति सीमा बनाम श्री अश्वनी कुमार* के निर्णय दिनांक 14.02.16 में भारत वर्ष में विवाह पंजीकरण संबंधित लगभग सभी कानूनों का, जिनमें वर्ष 1872 के पंजीयन *The Indian Christian*

Marriage Act of 1872 से लगाकर वर्ष 2001 में हरियाणा सरकार द्वारा बनाये गये, *Hariyana Hindu Merriag Regulation Rules, 2001* तक पर विचार कर केन्द्र सरकार व सभी राज्य सरकार को निर्देश जारी किये गये कि केन्द्र सरकार, विवाह पंजीकरण नियम भारत के सभी राज्यों में बनाये जाना तीन माह में सुनिश्चित करायें। यही नहीं माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा स्पष्ट निर्देश दिये गये है कि इन नियमों को प्रभावी करने के लिये अधिसूचना जारी करवाई जावें।

ऊपर के पदों में शादी का महत्व आवश्यकता व स्वतः परिणाम पर विचार करने पर अधिनियम, 2005 में धारा 2 (f) के तहत विधि द्वारा मान्यता प्राप्त नये संबंध "relationship in the nature of marriage" (***"शादी की प्रकृति में संबंध"***) का तुलनात्मक अध्यन किया है। आयोग की राय में शादी के रिश्ते का महत्व वर्तमान समय में भी किसी उचित कारण से कम नहीं हुआ है व यह रिश्ता अपने आप में एक उच्चतम स्तर का रिश्ता है। अधिनियम, 2005 की धारा 2 (f) के तहत मान्यता प्राप्त रिश्ता "relationship in the nature of marriage"(***"शादी की प्रकृति में संबंध"***) तथा इस रिश्ते को पारिवारिक संबंध की परिभाषा धारा 2 (f) में सम्मलित करने से मात्र महिलाओं को एक विवाहित महिला की तुलना में अधिनियम, 2005 से उचित सुरक्षा, सम्मान (डिगनिटी) व सामाजिक मान सम्मान प्राप्त नहीं होता है। अतः इन सभी कमियों की पूर्ति "relationship in the nature of marriage" (***"शादी की प्रकृति में संबंध"***) को माननीय सर्वोच्च के निर्णयों में की गई टिप्पणी की पालना करते हुए अधिनियम, 2005 में

संशोधन कर इसे एक प्रकार की शादी घोषित कर महिलाओं का मान सम्मान सुरक्षित किया जा सकता है। इस हेतु व्यक्ति के निजी वैवाहिक कानून में (पसर्नल लॉज) लागू किये जा सकते है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय के उपरोक्त सभी निर्णय से एक ही सार प्रकट होता है कि अधिनियम, 2005 में रखी गई गम्भीर कमी की पूर्ति "relationship in the nature of marriage" (***"शादी की प्रकृति में संबंध"***) हेतु अनेकों शादी के नियमों को लागू किये बगैर महिलाओं को एक वस्तु के रूप में पुरूष काम में ले लेगा। माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा शादी की प्रकृति के संबंध में व्याख्या करने के कारण से एक पुरूष या महिला शादीशुदा व्यक्ति से शादी की प्रकृति के संबंध नहीं रख सकते है, अन्यथा अधिनियम, 2005 में ऐसा कोई प्रतिबंध नहीं है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय से ही यह धारणा की जा सकती है कि एक व्यक्ति एक समय में एक ही शादी के प्रकृति का संबंध रख सकता है। परन्तु यह तथ्य अधिनियम, 2005 अंकित नहीं है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय के इन निर्णयों के पश्चात भी शादी की प्रकृति के संबंध को भंग करने के कारण व तरिके, न तो अधिनियम, 2005 में व न ही अन्य प्रकार से स्पष्ट है। ***यहां पुनः उल्लेख करना आवश्यक है कि वर्तमान विधि, अधिनियम, 2005 की स्थिति के अनुसार पुरूष को पूर्णतया स्वैच्छाचारी व महिलाओं के प्रति अमानवीय रिश्ते भंग का अधिकार प्राप्त है। इतने स्वैच्छाचारी अधिकार व भी इतने संवेदनशील अपरिवर्तनीय रिश्तों के भंग करने के अधिकार किसी भी धर्म, जाति अथवा समूह में जब भी पाये गये, माननीय न्यायालयों द्वारा इस अधिकार को महिलाओं के अधिकारों के विरूद्ध स्वैच्छाचारी (Manifestly Arbitrary), मनमर्जी (Capricious),***

सनकी (Whimsical) व विवेकहीन अधिकार घोषित किया गया। अधिनियम, 2005 द्वारा पुनः महिलाओं को त्यागने का स्वैच्छाचारी (Manifestly Arbitrary), मनमर्जी (Capricious), सनकी (Whimsical) व विवेकहीन अधिकार प्रदान कर दिया है। माननीय उच्चतम न्यायालय की संविधान पीठ द्वारा सायरा बानो बनाम भारत संघ के निर्णय (2017) 9 SCC 1 के पद संख्या 104 में प्रीवी कौंसिल के निर्णय रसीद अहमद 1931 SCC OnLine PC 78 में दिये गये निर्णय को सही नहीं मानते हुए माननीय उच्चतम न्यायालय के शमीम आरा के निर्णय को स्वीकार कर तीन तलाक को भारत के संविधान द्वारा सुरक्षित मूल अधिकार (अनुच्छेद–14) के विरूद्ध घोषित किया गया। जिन आधार पर तीन तलाक भारत के नागरिकों के मूल अधिकार के विरूद्ध घोषित किया गया है, ऐसे अधिकार अधिनियम, 2005 से पुनः पुरूषों को प्राप्त, बिना किसी जाति, धर्म के भेदभाव, हर पुरूष को प्राप्त हो गये हैं। यहां यह उल्लेखनीय है कि महिलाओं को बिना किसी कारण, स्वेच्छाचारी तरीके से, मनमर्जी से किसी भी स्थिति में, "शादी की प्रकृति में संबंध" से त्यागने के विषय पर *D Velusamy Vs. D. Patchaiammal, (2010) 10 SCC 469* व *Indra Sarma vs V.K.V.Sarma, (2013) 15 SCC 755* के प्रकरणों में माननीय उच्चतम न्यायालय का ध्यान आकृष्ट नहीं किया गया जो कि उपरोक्त दोनों निर्णयों से स्पष्ट है और माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा उक्त निर्णयों में *"शादी की प्रकृति में संबंध" किन न्यूनतम शर्तों का होना तो घोषित किया गया परन्तु ऐसे रिश्तों की समाप्ति के सम्बन्ध में अधिनियम, 2005 में कोई प्रावधान व शर्तें नहीं होने के सम्बन्ध में विचार कर आदेश पारित नहीं किया गया। परन्तु माननीय उच्चतम न्यायालय की संविधान पीठ का*

सायरा बानो प्रकरण में दिया गया निर्णय अन्तिम व बाध्यकारी होने से पुरूष द्वारा स्वेच्छाचारी तरीके से किसी महिला को शादी की प्रकृति में सम्बन्ध बनाकर ही नहीं, बल्कि भिन्न प्रकार का रिश्ता, लिव इन रिलेशनशिप छोडने का अधिकार नहीं है। परन्तु यह स्थिति निश्चित रूप से लिखित विधि में स्पष्ट रूप से अंकित नहीं होने से महिलाओं के मानव अधिकारों का गम्भीर हनन होगा। अतः आयोग इस विषय पर अधिनियम, 2005 में संशोधन करने अथवा अन्य कानून बनाये जाकर मानव अधिकारों की रक्षा करने व माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सायरा बानो प्रकरण में पारित निर्णय की भावना के अनुरूप कानून बनाने की अनुशंषा करता है।

सांराश के रूप में, संक्षेप में यह निष्कर्ष दिया जा सकता है कि विवाह पवित्र बन्धन हो या सामाजिक अनुबन्ध हो, स्त्री व पुरूष के रिश्ते व शारिरीक रिश्ते से संबंधित व समाज के स्थापित होने की प्रथम कड़ी होने के कारण से विश्व भर में धर्म,जाति,सभ्यता,क्षेत्रियता से ऊपर उठकर मान्यता प्राप्त इन रिश्तों में विश्व भर में विवाह में शारिरीक संबंध मूल व अत्यन्त आवश्यक स्वैच्छा से स्वीकार की गई शर्त है। इन रिश्तों से स्वछंन्दता वर्जित है, ऐसे रिश्तों में ऐसे रिश्ते के लिये प्रवेश वर्जित है। यह रिश्ते आवश्यक योग्यता रखने वाले स्त्री व पुरूष के बीच ही हो सकते है। ऐसे रिश्ते आमजन के सामने शादी के दोनों पक्षकारान द्वारा स्वीकार कर आमजन की जानकारी में पति–पत्नि के रूप में रहना आवश्यक है। इन रिश्तों में आवश्यक तत्व है :– विश्वास, समर्पण, भरोसा, एक–दूसरे पर निर्भरता, एक–दूसरे की जिम्मेदारी स्वीकारना, ऐसे रिश्ते से उत्पन्न बच्चों की संयुक्त जिम्मेदारी, बिना उचित कारण संबंध भंग नहीं करना, संबंध समाप्त करने से पूर्व आपस में समझने व समझाने का प्रयास करना व

आवश्यकता होने पर सहालकारों की सहायता लेना आवश्यक तत्व है। रिश्ते की समाप्ति के पश्चात भी जीवन्त परियन्त कुछ जिम्मेदारियों की पालना करना।

माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा ऊपर वर्णित निर्णयों में घोषित किया जा चुका है कि धारा 2 (f) अधिनियम, 2005 में वर्णित "relationship in the nature of marriage" ***"<u>शादी की प्रकृति में संबंध</u>"*** में शादी की शर्तो की पूर्ति आवश्यक है और माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों से यह भी स्पष्ट है कि ***"<u>शादी की प्रकृति में संबंध</u>"*** में यदपि किसी रिति-रिवाज व धार्मिक अनुष्ठान की आवश्यकता नहीं है, परन्तु शादी की प्रकृति के संबंध में से मात्र संबंध बनाने के लिये प्रक्रिया की छूट है या यू कहां जा सकता है कि अधिनियम, 2005 में ऐसे संबंध के लिये कोई प्रक्रिया निर्धारित नहीं करने की गम्भीर कमी है और इन कमियों में से जिन कमियों की और माननीय सर्वोच्च न्यायालय का ध्यान आकृष्ट किया गया था उन कमियों की पूर्ति न्यायिक निर्णय से की गई है। परन्तु स्पष्ट है कि महिलाओं के मानव अधिकारों को सैकण्डों वर्ष पूर्व से स्वयं समाज, जाति, धर्म द्वारा ही नहीं बल्कि इस विषय पर विधि बनने से पूर्व रूढ़ी (Custom) या प्रथा (Usages) को न्यायालयों द्वारा मान्यता प्रदान कर स्त्री के मानव अधिकारों की पुरूषों से रक्षा करने के लिये बिना किसी कारण स्वैच्छाचारी तरिके से व मनमाने अधिकारों का प्रयोग कर स्त्री को हर स्थिति में छोड़ने की पुरूष द्वारा मांगे गये या प्रयोग में लिये गये अधिकारों की अत्यन्त गम्भीर शब्दों में निन्दा करने के पश्चात भी अधिनियम, 2005 में पुरूष को स्त्री को उपयोग कर तिस्कृत कर, अपमानित कर, प्रताड़ित कर बिना किसी कारण छोड़ने के अधिकार प्रदान कर दिये गये है। आश्चर्यजनक है कि पुरूष के इस प्रकार के अंहकारी व्यवहार व अधिकार

के संबंध में महिलाओं द्वारा भी पूरा विरोध नहीं किया गया है ना किसी समाज सुधारकों द्वारा भी विरोध किया गया है। यहां तक कि सैकण्डों वर्षो से पुरूष के ऐसे अंहकारी, स्वैच्छाचारी व्यवहार के संबंध में, अगर सही है तो, पक्ष में एक भी तर्क कही पर प्राप्त नहीं हो रहा है। स्वाभाविक है पुरूष के ऐसे व्यवहार के पक्ष में व नारी अत्याचार के संबंध में कोई तर्क नहीं है।

उपरोक्त अध्यन के पश्चात आयोग राज्य सरकार को निम्नलिखित अनुशंषा करना उचित समझता है :-

अधिनियम, 2005 से "relationship in the nature of marriage" ***"शादी की प्रकृति में संबंध"*** को प्रथम बार भारत में विधिक मान्यता प्रदान की गई है परन्तु इस संबंध व विषय पर अन्य कोई भी विधि नहीं होने से व शादी के संबंध के लिये जो भी विधि, रूढ़ि, प्रथा है उनमें विषय पर सम्पूर्ण विधि है अर्थात सभी सेल्फ कनटेन्ड कानून है उसकी समान अधिनियम, 2005 को विभिन्न व्यक्तिगत कानून व कॉमन मैरिज कोड/सिविल मैरिज कानून में बनाये गये प्रावधानों तथा माननीय सर्वोच्च न्यायालय के दिये गये निर्णयों को ध्यान में रखते हुए "relationship in the nature of marriage" ***"शादी की प्रकृति में संबंध"*** के संबंध में सेल्फ कनटेन्ड थ्कानून बनाये जायें जिनमें का उल्लेख स्पष्ट रूप से किया जाये जैसे :- "relationship in the nature of marriage"

1. के रिश्ते के लिये पक्षकारान की क्या योग्यता होगी।
2. कौन-कौन व्यक्ति ऐसे रिश्ते स्थापित करने के अयोग्य होगें।
3. ऐसे रिश्ते को किस प्रकार से सार्वजनिक तौर पर पक्षकारान स्वीकार करेगें ताकि यह रिश्तें आमजन की जानकारी में रहे

और अन्य व्यक्ति रिश्तें की थ्जानकारी के अभाव में धोखा नहीं खा सकें।

4. ऐसे रिश्तों के पंजीकरण की प्रक्रिया निर्धारित की जाकर ऐसे रिश्तों का पंजीकरण आवश्यक घोषित किया जावें और माननीय सर्वोच्च न्यायालय श्रीमति सीमा बनाम अश्वरी कुमार निर्णय दिनांक 14.02.2006 में दिये गये निर्देशों की पालना ऐसे रिश्तों के लिये भी बाध्यकारी घोषित की जावें।

5. ऐसे रिश्तों के पक्षकार किन–किन परिस्थितियों में व किस विधि से रिश्तें समाप्त कर सकते है। ऐसे रिश्तें समाप्त करने से पूर्व आवश्यक रूप से परामर्श (Counselling) का प्रावधान रखा जायें।

6. ऐसे रिश्तें समाप्त किये जाने की प्रक्रिया के दौरान व उसके पश्चात न्यायालय जिला न्यायाधीश स्तर से कम नहीं द्वारा सभी प्रकार के विवादों के निस्तारण का प्रावधान किया जायें जिसमें तत्काल अन्तरिम सहायता के आदेश व त्वरित पालना के प्रावधान अधिनियम, 2005 में जोड़े जाये।

7. चूंकि अधिनियम, 2005 की धारा 2(f) की विधिक धारणा (Legal Fiction) से ***"शादी की प्रकृति में संबंध"*** को घरेलू रिश्ते (Domestic Relationship) शामिल किया गया है। अतः यह रिश्ता शादी का एक प्रकार है, अधिनियम, 2005 में घोषित किया जावें।

आयोग का मत है कि भारतीय संविधान के *अनुच्छेद–21* में व्यक्ति के जीवन के अधिकार से तात्पर्य, व्यक्ति के सम्मानपूर्वक जीवन से है, न कि मात्र पशुवत् जीवन से, जैसा कि माननीय उच्चतम न्यायालय के

अनेकानेक निर्णयों से अंतिम रूप से घोषित किया जा चुका है। भारतीय संविधान में प्रदान जीवन के मूल अधिकार का त्याग नहीं किया जा सकता है और ये भी माननीय उच्चतम न्यायालय के अनेकानेक सिद्धांतों से बाध्यकारी रूप से घोषित किया जा चुका है। किसी महिला का *"रखैल" (Concubai)* जीवन किसी भी दृष्टि से महिला का सम्मानपूर्वक जीवन *(Dignified Life)* नहीं कहा जा सकती है। *"रखैल" (Concubai)* शब्द अपने आप में ही अत्यन्त गम्भीर चरित्रहनन करने वाला एवं घृणित सम्बोधन है। अतः किसी महिला द्वारा अपने सम्मानपूर्वक जीवन का त्याग कर अपमानजनक जीवन, "रखैल" के रूप में जीवन, जीने का अधिकार नहीं है। इस प्रकार के जीवन की मांग कर महिला स्वयं भी अपने जीवन के मूल अधिकारों *(Fundamental Rights)* की सुरक्षा नहीं कर पाती है। आयोग का उपर्युक्त मत सन् 1927 में माननीय *Privy Council* द्वारा दिये गये निर्णय व माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सन् 1952 में *गोकलचन्द बनाम प्रवीणकुमार*, सन् 1978 में *बद्रीप्रसाद बनाम Director of consolidation* व सन् 2008 में *तुलसा बनाम दुर्गात्या* तथा अन्त में सन् 2013 में *श्रीमती इन्द्रा शर्मा* (2013) 15 SCC 755 के प्रकरण में घोषित विधिक घोषणा के बराबर है। अतः ऐसे रिश्तों में *Live in Relationship* को प्रोत्साहन देना तो दूर, ऐसे रिश्तों से महिलाओं को दूर रहने के लिए सघन जागरूकता अभियान चलाकर ऐसे रिश्तों की हानियों से महिलाओं को बचाना सभी मानव अधिकार रक्षकों, आयोगों व सरकारी विभागों तथा सरकार का कर्तव्य होना चाहिए। इस हेतु तत्काल आवश्यक कार्य करना राज्य व केन्द्र सरकार का दायित्व है। यह अत्यन्त आवश्यक विषय, अधिनियम, 2005 में नये रिश्ते "शादी के समान रिश्ता/शादी की प्रकृति में सम्बन्ध" को पारीवारिक रिश्ते की परिभाषा में

सम्मिलित किये जाने के कारण से उत्पन्न हुए भ्रम से महिलाओं को गुमराह कर शब्द, *"Live in Relationship"* स्थापित करने की प्रवृत्ति को रोकना अत्यन्त आवश्यक है। अतः इस सम्बन्ध में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा श्रीमती इन्द्रा शर्मा के प्रकरण में पद संख्या 61 व 62 में दिये गये निर्देशों की पालना करने हेतु राज्य सरकार में अन्तर्निहित विधायिकीय शक्तियों का इस्तेमाल कर राज्य सरकार स्वयं कानून बना सकती है तथा केन्द्र से इस सम्बन्ध में कानून बनाने का अनुरोध कर सकती है।

आदेश की प्रतिलिपि मुख्य सचिव, राजस्थान सरकार, जयपुर एवं अतिरिक्त मुख्य सचिव, गृह विभाग, राजस्थान सरकार, जयपुर को पालनार्थ प्रेषित की जावें।

(न्यायमूर्ति महेशचन्द्र शर्मा)
सदस्य

(न्यायमूर्ति प्रकाश टाटिया)
अध्यक्ष